

# आराधनास्वरूप।

संग्रहकर्ता-मुनीस धरमचंदजी हरजीवनदास-पाळीताणा।

'जैनविजय े प्रेस-स्रत।

घोषा (भावनगर) निवासी स्वर्भवासी सेठ ठाकरसी नत्थुआईके स्मरणार्थ "दिगंबरजैन" के ग्राहकों को नवमें वर्षका चौथा उपहार ।

# हुहहहहहहहहह<sup>ू अ</sup>३३३३३३३३३३३३ सर्वोपयोगी नवीन ग्रन्थ—

- ३० जैन-इतिहास. ३३०

(प्रथम भाग)

**海海海海海海海** 

कई वर्षेसि संक्षिप्त जैन इतिहासकी एक पुस्तक प्रगट होनेकी आवश्यकता थी जिसकी पूर्ति बाबू सूरजमहाजी जैन (संपादक "जैन प्रभात " इन्दौर ) ने यह पुस्तक प्रन् वट करके की है, जो जैन अनैन सभीको पड़ने योग्य है और हरएक पाठशाला, विद्यालयादिमें तो अवश्य प्रवेश करनेयोग्य है। इस प्रथम भागमें कुलकरोंसे लेकर श्री वासुपृज्यस्वामी तकका इतिहास है। पृष्ठ १५०, उत्तम छपाई, सचित्र और मूच्य

सव प्रकारके जैन ग्रन्थ और पवित्र केशर मिलनेका पता

मैनेजर, दिगंबरजैनपुस्तकालय-सूरत.

## दिगंबरजैनग्रंथमाला नं. ४५,



# आराधनास्वरूप।

(अनेक स्तुतिएं, पदों आदि साहित)

संग्रहकर्ता--

मुनीम धरमचंदजी हरजीवनदास-पालीताणा.

प्रकेशिक-

मूळचंद किसनदास कापड़िया-सूरतः

5×92×6

प्रथमावृत्ति.

वीर सं. २४४२. प्रातियाँ २१००

0-0(Ö**(D)**≥-0

घोषा (भावनगर) निवासी स्वर्गवासी होठ ठाकरशी

नत्थुभाईके स्मरणार्थ 'दिगंबर जैन' के

प्राहकोंको स्वर्ग वर्षका पांचवाँ उपहार।

बा.बी. देवालसागर सरि सान मंदिर

भी महसूकित्वेत स्माहता, केन्द्र, कोवा

**利、柘。** 



# Printed by :-

Moolchand Kisondas Kapadia at his 'Jain Vijaya' printing press, near Khapatia chakla,

Laxminarayan's wadi—Surat.

### Published by :--

Moolchand Kisondas Kapadia, Proprietor, D. Jain Poostakalaya & Hon: Editor, 'Digambar Jain,' from Khapatia chakla, Chandawadi-Surat.



# प्रस्तावना ।

ए तो नि:संशय छे के 'दिगंबर जैन' पत्रना आहकोने अमक अमक ग्रहस्थों के ब्हेनोना स्मरणार्थे पुस्तको भेट आपवानी योजना शरू थई छे त्यारभी ए दिशा तरफ अमारा गुजरातना केट-लाक माईओतुं लक्ष दोरायुं छे अने प्रथम ज्यारे सूचनाओ करवाथीज तेमां फळी भूत थवातुं हतुं त्यारे हवे तो विना सचना कर्ये आवी सहा-यता मळती जाय छे. एनो दाखलो आज पुस्तक छे के जे माटे र. १२५) घोघा ( भावनगर ) निवासी स्वर्गवासी होठ ठाकरकी नःशुभाईना स्मरणार्थे शास्त्रदान माटे तेमना पुत्र छगनलालभाईप मोकलवा इच्छा दर्शावेली, ते उपरथी ए माटे एक पुस्तकनी पसंदगी अमो करवाना इता, पण ते पहेलां भाई छगनलालना स्नेही पालीताणा निवासी मुनीम धरमचंद्जी हरजीवनदासे जणाब्वं के ए माटे ह जे पुस्तक तैयार करी मोकछ तेज छपाववान छे. जेथी पछी एमणे आ पुस्तक के जेमां सदास खजीविरचीत 'भगवतीआराधना '-मांथी पाने ४०९ थी ४२२ सधीनों तेनी मळ भाषामां उतारो करेलो छे ते तथा परचुरण पदो, स्तुतिओ, उपयोगी बोध वगेरेनो संग्रह लखी मोकलेलो, ते दाखल करीने आ पुस्तक **'हिगंबर जैन** 'ना श्राहकोने नवमा वर्षनी पांचमी भेट तरीके प्रकट कर्य छे.

वळी आ पुस्तकमां प्रथम स्वर्गवासी शेठ ठाकरशी नत्थ्रमाईना जीवननी ट्रंक नोंघ जे तेमना निकटना स्नेही आंकळावनिवासी **शा माणेकचंद फूछबंदे** लखी मोकलेली छे ते पण दाखल करी छै, जे वांचवाथी वांचकोने जणाहो के एक साधारण स्थितिना ग्रहस्थे योता पाछळ शुभ कार्यो माटे रु. १५००) नी सखावत योग्य व्यवस्थापूर्वक करी छे, जैनोमां दाननी रकमो तो हजारो रूप्या नीकळे छे, पण तेनो बराबर रीते उपयोग थतो नथी, माटे समयने

### 3

अनुसरीने इाल तो दाननी रकमोनो उपयोग विद्यादान, शास्त्रदान, जीर्णोद्धार अने जीवदया माटेज करवो जरूरनो छे. आपणे इच्छी-ग्रंथ के आरु. १५००) ना दाननुं अनुकरण आपणा बीजा माईओ कररोज.

वीर सं. २४४१ / ज्येष्ठ वदी २ ता. १७-६-१६ जैनजातिसेवक-मूळचंद किसनदास कापड़िया स्रत.

# स्वर्गवासी शेठ ठाकरसी नत्युभाईना-जीकननी टूंक नोंध,

रत्नो धळमांथी मळी आवेछे, एदी आपणी परापूर्वन्त गुजराती कहेवतने स्वीकार्या सिवाय चालशे नहि. आजयी दश वर्ष पहेलां भारतवर्षने एवां स्वमो पण नहि आवेलां के देशसु-धारानी प्रगतिमां आटलो आगळ वधारो थशे, पण आजकाल हिंदमां हस्ती घरावती संख्याबंध पारमार्थिक संस्थाओ अने ते सघळा उपर उन्नतिनो झुंडो स्थापनार घणास्तरा गरीब अव-स्थामां उछळी, अचानक बहार आवी, महान पुरुषोमां गणना पामेला जणाया छे. तेमनां सत्कार्यो तथा आनंदमंगळनी मद्रलीओ देशना वरनीओने वारसारूप छे. अत्यारे ने व्यक्तिना जीवनप्रदेश तरफ आपणे वळीए छीए, ते व्यक्ति महान पुरुषोना पत्रकमां नाम नोंघावी गयेल नथी, तेम तेवा प्रसंगो अने संयो-गोमां तेमनुं उछळवुं पण थयुं नहोतुं. महद् भाग्य ने महद इच्छाना तेओ साधक नहोता, एटले सर्वसाधारण पण स्वच्छता-दर्शक हतुं. उपर जणाव्या मुजब तेओ महान पुरुष नहोता. पण महान पुरुषोना गुणोनो कंईक अंश तेमनामां हतो, एम निर्विवाद लखबुं पहेंछे.

3

दिरयाइ मार्गपर काठियावाडने किनारे घोघा बंदर छे, त्यां दिगंबर जैन दशाहुमड ज्ञातिमां शेठ नत्थुभाई झवेरचंद-नुं कुटुंब जाणीतुं हतुं अने आ चरित्रना नायक शेठ ठाकरसी-माईनो जन्म तेज कुटुंबमां शेठ नत्थुभाईने त्यां थयो हतो. तेमना पिताए घोघामां एक कुशळ गांधी व्यापारी तरीके सारी स्याति मेळवी हती; तेमने वे पत्नी हतां, जेमांनी बीजी हाल हयात छे. प्रथम पत्नीथी तेमने वे पुत्रो हता, जेमां मोटानुं नाम दोकरसी अने बीजा आ निवंधनायक ठाकरसीभाई हता.

वीसमी सदीनी शरूआतमां अत्यारना प्रमाण करतां केळ-वणी पामवाने सगवड तथा साधनो घणां ओछां हतां, जेथी ते जमानाना पुरुषो स्कुलकेळवणी करतां संसार के व्यवहारकुशळ बनवं वधारे पसंद करता, अने तेवोज कम रा. ठाकरशीभाई माटे तेमना पिता तरफथी योजवामां आव्यो हतो. आपणी देशी केळवणींनो बनी शके तेटलो योग्य अभ्यास कराव्या बाद लग्न-संबंधथी तेमने जोडवामां आव्या. त्यार बाद रा० ठाकर-शीभाईए संसारसमुद्रमां पोतानी जीवननौका झोंकावी अने ते समये व्यापारमां व्यवहार्ज्ञ एक कुश्चळ सुकानी तरीके तेमणे सारी नामना मेळवी. रा. वक्ताए एक ठेकाणे लख्युं छे के " दैव्यनी वातो विचित्र होय छे, हर्षशोकनी रंगीन ध्वजापताका दनियामां क्षणे क्षणे फरक्या करे छे अने दशी वीसी या उदय अस्तना पडदा निरंतर ऊंचा नीचा थया जाय छे. " ए सुत्रोनो अनुभव रा. ठाकरसीभाईने पण लेवो पडयो. संवत १९५७मां तेमना पेढीनायक पिता शेठ नत्थु गांधीनो स्वर्गवास थयो, व्यापारमां नुकशान आववा लाग्युं, जळमार्गी वहाणोमां पण कुदरतनी गेबी लाकडी अचानक अथडाई, त्यार पछीनी स्थितिने सुधारवाना इरादाथी नोकरी नापसंद करता होवाथी कोई स्वतंत्र व्यापार अर्थे सवत १९५९मां रा-ठाकरसीमाई भावनगर आव्या, पण सारी मूडी मळे निह अने पूर्वनी जाहोजलालीमां तुर्तातुर्त पेसलुं ए बनी शके तेम नहोतुं; जेथी तेओए थोडे पैसे स्वतंत्रतानो अनुभव लेवा दुधनी दुकान खोली, तेमां प्रमाणिकपणे काम चालवाथी तेमां तेमने फायदो मळवा मांडयो. काम आगळ वधारवानी इच्छाथी मदद अर्थे तेमना पुत्र छगनलाल जे ते समये गुजराती स्कूलमां मास्तर हता, तेमने नोकरी मुकाबी आ कार्यमां योज्या.

प्रवृत्ति वधतां पैसानी प्राप्ति थवा मांडी. सत्यज छे के कार्य पति हिंगत न हारतां स्वाश्रय—खंत—विनप्रमाद निखालसी हृदय साथे धर्म प्रति श्रद्धा अने आ उन्नित्तना कृंगे चढावनारी केटलीक सडकोमांनी आ महुंग ठाकरसी-भाईमां दृष्टिगोचर यती हृती.

तेमना त्रण पुत्रो श्रीयुत्-छगनलाल,अमरचंद तथा हीरालाल अने वे पुत्रीओ वगेरे सारी स्थितिमां दिवस निर्गमन करे छे. आ सुखी युथ स्वजन स्तेहीने बाह्य चक्षुश्री छेल्लां निरखी संवत १९७२ ना कारतक वद ३ ने बुधवारना प्रभाते दिव्य चक्षुश्री संतोषातां परस्रोकगमन थयुं. प्रभो ! आ भविक आत्माने शांति—शांति बक्षो.

नामांकित जनो तथा मातवर श्रीमंतोना संबंधी घणुं लखनामां आवे छे, पण अनुकरणीय सद्गुणसंपन्न साधारण पुरुषोने ढंकायेल गुप्त राखवानी रीतमां सुधारो करवा जैनेचरे विचारवा जेवुं छे,

Ģ

गमे तेवी हालतना पण चारित्रवान पुरुषोने बहार लाववानी भावना जैन प्रजाना हृदयतटपर चित्राववी जोईए.

श्रीमंतोना करोडो रुपिया करतां स्वाश्रयी साधारण मनुष्यना सो रुपीआ वधारे वरकतवाळा होय छे, ए दास्र अंतरमां उतारी वांचके स्वर्गवासी ठाकरशीभाईना अवसान समयनी दान—व्यवस्था तरफ दृष्टि करवानी छे. छेवटमां मारा मित्र रा. वक्ताना शब्दोमांज वांचकने ध्यानमां राखवा सोनेरी कलम हस्तगत करावी विलोकी शेठ ठाकरसीभाईना आत्माने पुनः पुनः शांति याचतो विरमीश.

"उच्च कोटीनां जीवनचरित्रो अवलोकवां अने आचरणमां मूकवां ए वांचकना भावी उदयनो अनुपम आरसो छे " नीचेनी तेमनी दान व्यवस्था तरक नजर फेरवीशुं- १७५) गरीबोने अनाज, कपडां तथा पशुओने घास विगेरेमां. १२५) जीवदयामां.

- २५) तेओना अवसाननी तिथिए कसाईवाडे जीव छोडाववा सार.
- १००) तेओश्रीनी अवसानितिथिए हर वर्षे घोघामां माछ-लानी जाळ छोडाववामां ते रकमना व्याजमांथी उपयोग.
- १५०) भावनगरना दहेरासरजी माटे इंद्रध्वजानी गाडी कराववी.
- १२५) भावनगरना दहेरासरजी माटे **चांदीनुं तोरण** कराववामां.
  - ५०) भावनगरना दहेरासरजीमां दर साले अमुक तिथिए अभि-षेक, पूजा तथा प्रभावना तेना न्याजमांथी थाव.
- भावनगरमां विद्यानंदगुदनां पगलां गाम बहार छे तेना जीणाद्धारमां.

- १००) घोघाना दहेरासरजीना जीर्णोद्धारमां.
- १००) श्री 'दिगंबर जैन ' पत्रमां एक पुस्तक भेट आपवा माटे.
- १६५) विद्यादानमां तथा अनाथाश्रमोमां नीचे मुजब आप्या-२०) भावनगरनी दि. जै. संतोषक हेन पाठशाळामां भणती बाळाओने इनाम वहेंचवामां.
  - २५) हस्तिनापुरना रूषभ ब्रह्मचर्याश्रममां.
  - २५) बनारसना स्याद्वाद महाविद्यालयमां.
  - २५) मुरादाबादना श्राविकाश्रममां.
  - २५) दिल्हीना अनाथाश्रममां.
  - १०) मुंबाईना आविकाश्रममां.
  - १०) महाविद्यालय-मथुरा.
  - १०) प्रे. मा. दिगंबर जैन बााईंग अमदाबादना विद्या-थींने स्कोलरशीप आपवामां.
    - ५) नडियाद अनायाश्रममां.
    - ५) मुगां बहेरांनी शाळा-अमदावादमां.
    - बोरसदना अनाथाश्रममां,
    - वडोदराना श्री फतेसिंहराव अनाथाश्रममां.



उपर मुजब र. १०९०)नो हाल व्यय थई चुक्यो छे अने ह. ४१०)नो योग्य समये व्यय थतो जहो, एटले एकंदरे ह. १५००) जेवी सारी रकम समयने अनुसरता कार्यो माटे आ साधारण स्थीतिना शहस्य काढी गया छे तेज साधारण मनुष्योने जीवनमां जोडवा योग्य नमुनेदार दाखलो हो. अस्तु.

आंकळाब (स्रेहा) वीर सं. २४४२. ज्येष्ठ सुद ११ } ता. ११-६-१६

माणेकलाल फूलचंद शाह.



स्वर्गवासी होठ ठाक्तरशी नत्थुभाई घोघा (भावनगर)

<sup>&#</sup>x27;जैन विजय " प्रेस-स्रत.

## ॥ श्रीबीतरागाय नमः॥



# वीस व्यहरमान स्तुति (सवैया ३१ सा)

श्री मंदिर आदि जिन राजत विदेह मांहि पानरें घनुष बपु धारे भगवंत है। कोटपूर्व आउ जान नंत ज्ञान दर्शवान मुखहु अनंत जाके वीरज अनंत है!! सिंहासन आसनपे आपश्री वीराजमान खीरे तीहुं काल वाणी मुणे सब संत है। अब है वरतमान ध्यावे नित इंद्र आन में हुं बंदु बीस जिन शिवतिय कंत है।।

# ॥ श्लोक ॥

अईन्तः सिद्धाचार्योपाध्यायसाधवः परमेष्टिनः । तेपि स्फुटं तिष्टन्ति आत्मानि तस्मादात्मा स्फुटि मे श्वरणम् ॥ अर्थ---अर्हन्त सिद्ध आचार्य उपाध्याय और साधु ये पंच परमेष्टी है तेही मेरे आत्मामं तिष्टे हैं इससे आत्मा ही मझे

शरण है ॥

भावार्थ--यह परभेष्टी आत्मामें तब ही टहर सकता है जब की उनका स्वरूप चिंतवन कर आत्मामें ज्ञेयाकार वा ध्येया- कार किया होय इससे परमेष्टीको नमस्कार किया जानना और आगम भाव निक्षेप कर जब आत्मा जिसका ज्ञाता होता है तब वह उसी स्वरूप कहलाता है। इससे अईतादिकके स्वरूपको ज्ञेयरूप करने-वाला जीवात्मा भी अईन्तादि स्वरूप हो जाता है और जब वह निरंतर ऐसाही बना रहे है तब समस्त कर्म क्षयरूप शुद्ध अवस्था (मुक्त) हो जाती है। जो समस्त जीवोंको संबोधन करनेमें समर्थ है सो अईन्त हैं अर्थात् जिसके ज्ञान दर्शनपुख वीर्य परिपूर्ण निरावरण हो जाते हैं सो ही अईन्त हैं, समस्त कर्मके क्षय होनेसे जो मोक्ष प्राप्त हो गया हो सो सिद्ध है, शिक्षा देनेवाले और पांच आचारों-को धारण करनेवाले आचार्य है। श्रुतज्ञानोपदेशक हो तथा स्वप्रमक्तका ज्ञाता हो सो उपाध्याय हैं। और रत्वज्ञयको साधन करे सो साध है।

यहां कोई प्रश्न करे कि, नमस्कार करनेकी योख्यता परमात्मामें कैसे है इसका उत्तर यह जीव नामा पदार्थ निश्चयसे स्वयंही परमात्मा है किन्तु अनादि काल्से कर्माच्छादित होनेके कारण जबतक अपने स्वरूपकी प्राप्ति नहीं होती है तबतक इसको जीवात्मा कहते हैं। जीव अनेक हैं, इस कारण जो जीव कर्म काटकर परमात्मा अर्थात् सिद्ध हो गये हैं; उनका स्वरूप जान उन्हीं नेसा अपना मी स्वरूप जाने तो उनके स्मरण ध्यानसे कर्मोको काटकर जीवात्मा स्वयम् उस पदको प्राप्त होता है। अतः जबतक कर्म काटकर उनके जैसा न होय, तबतक उस परमात्माके स्वरूपको नमस्कार करना आवश्यक है तथा उसका स्मरण ध्यान करना भी उचित है।

पश्च—तीन रत्न और सम्यक् त्य कहांपर तिष्ठे है ?

उत्तर—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र और
सम्यक् तप यह चारो आत्मामें ही तिष्टे है तिससे आत्मा ही मेरे
शरण है। भावार्थ—इर्शन ज्ञान चारित्र और तप ये च्यारों आराधना
मुझे शरण हो, आत्माका श्रद्धान आत्मा ही करे है, आत्माक।
ज्ञान आत्मा ही करे है, आत्माकी साथ एकमेक भाव आत्मा ही
होता है और आत्मा आत्मामें ही तपे है, वही केवळ्ज्ञान ऐधर्यको
पावे है, ऐसे चारों प्रकार कर आत्माहीको घ्यावे इससे आत्मा ही
मेरा दु:ख दूर करनेवाळा है, आत्मा ही मंगळ्ळ्य है।

# ् े ् ्रें ० ्रें ० लिखान ।

अनंतानुवंधी ४, मिश्यात्व १, सम्यग् मिश्यात्व १ सम्यक्व १ इन सात प्रकृतिनिका उपरामतें उपराम सम्यक्त्व होइ अर इन सप्त प्रकृतिनिके क्षयते क्षायिक सम्यक्त्व होय है। बहुरि अनंतानु-वंधी कषायनिका अप्रशस्त उपरामको होतें अथवा विसंयोजन होतें बहुरि दर्शनमोहका मेद जो मिश्यात्व कर्म अर सम्यग् मिश्यात्व कर्म इन दोऊनिक्कं प्रशस्त उपराम रूप होतें वा अप्रशस्त उपराम होतें वा क्षय होनेके सन्मुख होतें बहुरि सम्यक्त्वप्रकृतिरूप देश-यातिस्पर्द्धकनिका उदय होतें ही जो तत्वार्थका श्रद्धान है उक्षण जाका ऐसा सम्यक्त्व होइ सो वेदक ऐसा नाम धारक है। जहां विवक्षित प्रकृति उदय आवने योग्य नहीं होइ अर स्थिति अनुभाग 8]

# दिगंबर जैन ।

घटने वधने वा संक्रमण होनेयोग्य होइ तहां अप्रशस्तोपशम जानना । बहुरि जहां उदय आवने योग्य नहीं होड़ अर स्थिति अनुभाग घटने वधने वा संक्रमण होने योग्य भी नहीं होइ तहां प्रशस्तोपशम जानना । बहुरि तिहां सम्यक्त्वप्रकृतिका उदय होतैं देशवातिस्पर्द्धकनिकै तत्वार्थ श्रद्धान नष्ट करनेकी सामर्थ्यका अभाव है। अर श्रद्धानकूं चल मल अगाद दोष करि दूषित करे है । जातें सम्यकृत्वप्रकृतिका उदयके तत्त्वार्थश्रद्धानके मल उपनावने-मात्रहीका सामर्थ्य है । तिह कारणतें तिस सम्यक्त्व-प्रकृतिके देशघातिपना है । तिस सम्यक्त्वप्रकृतिके अनुभव करता जीवकै उत्पन्न भया जो तत्वार्थश्रद्धान, सो वेदक-सम्यक्त्व है, इसहीकूं शायोपशमिक सम्यक्त्व कहिये है। जातें दर्शनमोहके सर्ववातिस्पर्द्धकनिका उदयका अभाव है लक्षण जाका ऐसा क्षय होतें बहुरि देशघातिस्पर्ककरूप सम्यक्त्वप्रकृतिका उद्य होतें बहुरि तिसहीका वर्तमानसमय संबंधीतें उपरिके निषेक उद्यक् नहीं प्राप्त भये तिन संबंधी स्पर्द्धकनिका सत्ता अवस्थारूप हैं लक्षण जाका ऐसा उपराम होते वेदकसम्यक्त्व होय है, तातै याहीका दूसरा नाम शायोपरामिक सम्यक्त है ॥

अब इस सम्यक्तवप्रकृतिका उदयतें जो श्रद्धानके चलादिक दोष लागे है तिनिका लक्षण कहे हैं। अपने ही " ने आप्त आगम पदार्थरूप " श्रद्धानके भेदनिविषें चलायमान होइ सो चल है। जैसे अपना कराया हुवा अर्हत्प्रतिविम्नादिक घिषें "यहू मेरा देव हैं" ऐसे ममता करी बहुरी अन्यका कराया अईत्प्रतिर्विवादिक विषे '' अन्यका है '' ऐसे परका मानि परिणाममें भेद करे है तातें चल कहा है।

इहां दृष्टांत कहे हैं—जैसें नाना प्रकार कछोलिनकी पंक्ति विषे जल एक ही तिष्ठे है तथापि भी नाना रूप होई चले है, तैसें सम्यक्त्वप्रकृतिका उदयतें श्रद्धान है सो श्रमणरूप चेष्टा करे है। भावार्थ—जैसे जल तरंगनिविषें चंचल होई परंतु अन्य भावकूं न भजे; तैसें वेदक सम्यग्हष्टिह् अपना वा अन्यका कराया जिनविम्बादिक विषें " " यहू मेरा है यहू अन्यका है " इत्यादिक विकल्प करे है, परंतु अन्य रागी द्वेषी देवादिककूं नाही भजे है।

अव मिलनपणा कहे हैं — जैसें शुद्ध सोनाहू मलका संयोगतें भेला होई है; तैसें सम्यक्त्वहू सम्यक्त्वप्रकृतिके उद्यतें
रांकादिक मलदोषका संयोगतें मलीन होई है। अब अगाद कहे है।
जैसे वृद्धका हस्तकी लाठी स्थानमें तिष्ठतीहू कंपायमान रहे है—
गिरे नहीं तोहू टट नहीं है तैसें आप्त आगम पदार्थिनिका श्रद्धानरूप
अवस्था तिस विषे तिष्ठता हूवा भी परिणाममें कांपे है, टट नहीं
रहे, ताकूं अगाद कहिये है। ताका उदाहरण ऐसा—समस्त अरहंत
परमेष्ठीनिक अनंतराक्तिपना समान होतेहू जाके ऐसा विचार होई
इस शांतिकिया विषे शांतिनाथ स्वामी ही समर्थ है, बहुरि इस
विध्ननाशन आदि किया विषे पार्धनाथस्वामी ही समर्थ है इत्यादि
प्रकार करि रिच—प्रतीतीकी शिथिलता है तातें बृढेका हाथ विषे
जाठीका शिथिलसंबंधपना करि अगादका दृष्टांत है। ऐसें सम्यकृत्व

प्रकृतिके उदयकरि श्रद्धा चलमल अगाढ दोप क्षयोपरामसम्यक्रवमें आवे हैं अर कर्मका नारा करनेकूं समर्थ है।

बहुरि अनंतानुबंधी ४, दर्शनमोहनीय २, इन सात प्रकृति-निका सर्व उपराम होनेकिर औपरामिक सम्यक्त्व होय है। अर इन सात प्रकृतिनिका क्षयतें क्षायिक सम्यक्त्व होय है। इन दोऊ सम्यक्त्वमें शंकादिक मल्लिका अंदा भी नाहीं तातें निर्मल है। अर परमागममें कहे पदार्थनिके श्रद्धानमें कहूं भी नहीं स्वलित होइ है। तातें दोऊ सम्यक्त्व निश्चल है। अर आप्त आगम पदार्थ-भगवान्के कहे तिनमें तीत्र रुचि धारे हैं, तातें दोऊ ही सम्यक्त्व गाडरूप है। जातें चलमल अगाद दोष उत्पन्न करनेवाली सम्यक्त्व-प्रकृतिके उदयका अभाव है। ताते ये दोहू सम्यक्त्व निदीष है।

अब व्यवहार सम्यक्तवका विशेष कहे हैं—जो सत्यार्थ आस आगम गुरूका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है। आसका स्वरूप ऐसा है— जो क्षुधा, तृषा, जन्म, जरा, मरण, राग, द्वेष, शोक, भय, विस्मय, मद, मोह, निद्रा, रोग, अरित, चिंता, स्वेद, खेद ये अटारह दोष-रिहत होय; अर समस्त पदार्थनि के भूत भविष्यत् वर्त्तमान त्रिकाल-वर्त्ती समस्त गुणपर्यायनिक् क्रमरहित एकैकाल प्रत्यक्ष जानता ऐसा सर्वज्ञ होय; बहुरि परमहितरूप उपदेशका कर्ता होय सो आस अंगीकार करना। जाते जो रागी द्वेषी होइ सो सत्यार्थ वस्तुका रूप नहीं कहे, अर जो आपही काम कोथ मोह क्षुधा तृषादिक दोष-सहित होइ, सो अन्यकूं निर्दोष कैसे करे १ अर जाके इंद्रियांके आधीन ज्ञान होय अर क्रमवर्ती होय सो समस्तपदार्थनिक अनंता- नंतानंतपरिणिति सहित कैसें जाने ? अर दूरवर्ती स्वर्ग नरक मेरु कुलाचलादिनिकूं अर पूर्वे भये जे भरतादिक रामरावणादिक अर सूक्ष्म परमाणू आदिक सर्वज्ञविना कोन जाने ? बहुरि परम हितोपदे-शक विना जगतके जीवनिका उपकार कैसें होय ? तातें वीतराग सर्वज्ञ परम हितोपदेशक विना आप्तपणा नहीं सँभवे हैं।

जिनकै रास्त्रादिक ग्रहण करना तो असमर्थता अर भयभीतपणा प्रकट दिखावे है, अर स्त्रीनिका संग वा आभरणादिक प्रकट कामीपणा रागीपणा दिखावे है तिनकै आप्तपणा कदाचित नहीं संभवे है। तातें परीक्षा करि नाकै सर्वज्ञता अर वीतरागता अर परम हितोपदेशकता ये तीन गुण होइ, सो आप्त है । जाकै वीतरागता ही होइ अर सर्वज्ञपणा नहीं होई तो वीतरागता तो घटपटादिक अचेतन द्रव्यनिकैंह क्षां तृषा रागद्वेषादिकके अभावतें पाइये है, तिनके आप्तपणा प्राप्त होइ-वा सर्वज्ञत्व विशेषण आप्तका नहि होय तो इंद्रियनिके आधीन किंचित् किंचित मूर्तिक स्थूल निकटवर्ती वर्तमान बस्तुके जानने-वालेके वचनकी प्रमाणता होई । सो अल्पज्ञके कहे वचन प्रमाण नहीं । तातें अल्पज्ञानीके आप्तपणा नहीं संभवे है तातें वीतराग " सर्वज्ञ " ऐसा कह्या । अर वीतरागता अर सर्वज्ञपणा दोय विशेषण ही आतकै कहिये तो वीतराग सर्वज्ञपणा तो मोक्षस्थानमें सिद्धनि-केंद्र पाइये हैं। यातैं परम हितोपदेशकपणा विना आसपणा नहीं बने है । तातैं सर्वज्ञता वीतरागता परम हितोपदेशकता अरहंतहीकै संभवे है । बहरि श्रुत जो आगम ताका रुक्षण श्री रत्नकरंड नाम परमागममें ऐसा कह्या है-

1

आप्तोपन्नमनुद्धंच्यमदृष्टेष्टविरोधकं । तत्वोपदेशकृत् सार्वे शास्त्रं कापथबद्दनम् ॥ १ ॥

अर्थ-एते गुणसहित होय सो शास्त्र है। आस जो सर्वज्ञ वीतराग ताकी दिव्य ध्वनिकरी प्रकट कीया हाय अर जाका अर्थ तथा शब्द वादि प्रतिवादी करि तिरस्कारकुं नहीं प्राप्त होड़, एकांतीनिकी मिथ्या युक्ति करी छेद्या नही जाय, बहुरि प्रत्यक्ष अनुमानकरि जामैं विरोध नहीं आवै, अर वस्तुका जैसा स्वभाव है तैसा तत्त्वभूत उप-**देशका करनेवाला होइ, बहुरि समस्त जीवनिका हितरूप हो**इ **।** किसही जीवका अहितकूं नहीं करता होय, अर कुमार्गका दूरि करनेवाला होय सो शास्त्र है। जातें अल्पज्ञानीका कह्या तथा रागी द्वेषीका कह्या तो प्रमाण ही नहीं है । तातें आप्तका उपदेश्या आगम है सोही प्रमाण है। अर जाका अर्थ परवादीनिकरी बाधाक प्राप्त होइ प्रमाणकरि बाधित होइ सो काहेका आगम*ें* बहरि जामैं प्रत्यक्षप्रमाणसं बाधा आजाय वा अनुमानसू बाधा आजाय, सो काहेका आगम ? बहुरि जामैं सारभूत जीवका कल्याण रूप उपदेश नहीं, सो काहेका आगम १ बहुरि जो जीवनिका बात करनेवाला दु:खदायी होय, सो शास्त्र शस्त्र है, बुद्धिवानोनिकै आदरने-जोग्य नहीं है। अर जो संसारके कुमार्गक प्रवर्तन करावे, सो खोटा आगम है।

अव गुरुका लक्षण ऐसा है— विषयाशावशातीतो निरारंभोऽपरिग्रहः ज्ञानध्यानतपोरक्तस्तपस्त्री स मशस्यते ॥ १ ॥

अर्थ-जो पंच इंद्रियानिके विषयनिकी आशाकरिर-हित होय, नाके इंदियनिके विषयनिमे वांछा नष्ट हो गई होइ, बहुरि जाकै किंचिनमात्रह आरंग नहीं होय, अर जाके तिलतुष मात्र परिग्रह नहीं होय अर जो ज्ञान ध्यान तपमें लीन होय-रक्त होय सो तपस्वी प्रशंसा योग्य है। ऐसे आप आगम गुरु मैं जाकै दढ श्रद्धान होड़ सो सम्यगुदृष्टि है। जातें कार्तिकेयस्वामीद् स्वामीकार्तिकेयानुपेक्षाविषे सम्यक्तवका छक्षण ऐसा कह्या है-जो अनेकांत खरूप तत्त्वकूं निध्यय करि सप्त भंग करि सहित अतज्ञान करि वा नयनिकरि जीव अजीवादिक नव प्रकारके पदार्थनिक् श्रद्धान करे है ' सो शुद्ध सम्यग्दृष्टि है। तथा जो जीव पुत्र कलत्र आदिक समस्त अर्थनिमैं मद गर्व नही करे है—उपराम भाव जे मंद कषायरूप भाव तिनक भावनारूप करे है अर आपके नृणवत् लघु माने है अर विषयनिकूं सेवन करे है अर समस्त आरं-भमें वर्ते है, तोड़ जाकै मोहका ऐसा विलास है सो समस्त विषय-निकूं हेय माने है-त्यागने योग्य माने है। चारित्रमोहकी प्रकलतातें विषयनिमें आरंभमें प्रवर्तताडू विरक्त है-नहीं राचे है, जो उत्तम सम्यक गुणनिके ब्रहणमें आसक्त है, अर उत्तम साधुजननिमें विनयसंयुक्त जाकी प्रवृत्ति है, अर साधर्मीनिमें जाके अस्यंत अनुराग है, अर देहसूं मिलि रह्याइ अपने आत्माकं अपना ज्ञानगुणकरि भिन्न जाने है, अर जीवसूं मिल्या देहकूं कंचुक जो बस्त्र वा वकतर समान भिन्न जाने है, सो शुद्ध सम्यग्रहि है।

गाया-णिज्जियदोसं देवं । सञ्जजीवाण दयावरं धम्मं । विज्जियगंथं च गुरुं । जो मण्णादिसो हू सिंहेठी ॥ १ ॥ अर्थ—जो अठरा दोष रहित सर्वज्ञकूं तो देव माने है अर समस्त जीवनिकी दयामें तत्पर ताकूं धर्म माने है, अर समस्त परिम्रहरहितकूं गुरु माने है, सो सम्यगृदृष्टि है ।

गाथा-दोससिंहयं पिदेवं । जीवहिंसाइसंजुदं धम्मं । गंथासत्तं च गुरुं । जोमण्णादि सोह क्रहिटी ॥२॥

अर्थ—नो रागद्वेषादिक दोष सिहतकूं देव माने है। अर जीविहिंसासिहत धर्म माने है, अर परिग्रहमें आसक्तकूं गुरु माने है सो मिध्यादृष्टि है। कोऊ देव मनुष्यादिक इस नीवकूं लक्ष्मी नहीं दे है। अर इस जीवका कोऊ उपकार नहीं करे है। उपकार अर अपकारकूं अपना उपानिन कीया पुण्यपापरूप कर्म करे है। काउकूं काऊ अशुभ कर्म हरनेको अर शुभ कर्म देनेको तीन लोकमें देव दानव इंद्र अहिंगद्व समर्थ नहीं है—कर्म तो अपने शुभ अशुभ परिणामके अनुकुल बंधे है—अर द्रव्य क्षेत्र काल भावका निमित्तकूं पाय अपना रस देय निर्नेर है। तातें पर तो निमित्त मात्र है। जो भिक्त किर पूने ह्ये व्यंतर योगिनी यक्ष क्षेत्रपालादिकही लक्ष्मी देवे तो धर्म करना व्यर्थ होनाइ। समस्त व्यंतरनिहीकूं पुनि अपना हित करे, पूना दान ध्यान शील संयमादिक निष्कल होनाइ। नातें सुल आवें सो सातावेदनीयकर्मके उद्यते आवे।

अर कर्म कोऊकूं कोऊ देनेकूं समर्थ नहीं है। तातें अन्यकूं दूपण देना वा राग करना मिथ्या है। जो हितके इच्छक हो तो परम धर्ममें प्रवर्तन करे।।।

बद्दि निस जीवके जिस देशमें जिस कालमें जिस विधानकिरके जन्म वा मरण, सुख, दुःख, लाभ, अलाम, संयोग वियोग होना जिनेंद्र भगवान केवल्ज्ञानकिर निश्चित जान्या है—देख्या है तिस जीवके तिस देशमें, तिस कालमें, तिस विधानकिरके तैसेंही होयगा। इसकुं अन्यथा करनेकुं चलायमान करनेकुं इंद्र वा अहमिंद्र वा जिनेंद्र समर्थ नहीं है। ऐसें जो निश्चय नयतें समस्त द्व्यनिके समस्त पर्यायगुणनिके परिणमनकुं जाने है सो शुद्ध सम्यग्दष्टि है। अर जो इसमें शंका करें सो मिथ्यादृष्टि है। बहुरि जो तत्व जाननेकुं समर्थ नहीं है सो जिनेंद्रके वचननिहीं अद्धान करें है। जो जिनेंद्र भगवान दिव्य ज्ञानतें देखि किर कह्या है, सो समस्तमें समयक् इच्छा करूं हुं—प्रमाण करूं हुं, प्रहण करूं हुं ऐसा जाके हट निश्चय है, सो मंदज्ञानीह सम्यग्दिष्टि है।

सम्यग्दर्शनके पचीस दोष है—तिनकूं टारि श्रद्धानकूं उज्बल करना । तिनमें मूढता तीन २, अष्टमद ८, शंकादिक दोष आठ ८, अनायतन छह ये पचीस दोष हैं तिनमें मूढताकूं वर्णन करे है— नदीस्नानमें धर्म माने, समुद्रकी लहरीनिके स्नानमें धर्म माने, पाषाण का वालुका पूंच करनेमें धर्म माने, पर्वततें पडनेमें अग्निमें प्रवेश करनेमें धर्म माने, संकांतिमें दान करनेमें, ग्रहणमें स्नान करनेमें धर्म माने, सो लैकिक मूढ है। बहुरी हमारा वांछित देव देगा ऐसी आशा करना; तथा बह, भूत, पिशाच, योगिनी, यह, क्षेत्रपाल, सूर्य, चंद्रमा, शनैश्वरादिकनिकुं वांछितकी सिद्धीके अर्थि पूजा करना, दान करना सो देवसृहता है। तथा जे च्यारि निकायके देवनिके स्वरूपकरि रहित अर देव देवाधि—सर्वज्ञपणाकरि रहित जिनका विकारी रुप वा तिर्यचनिकेसे मुख जिनका हस्तीकासा मुख सिंह-कासा मुख गर्दभमुख वानरासे मुख सुर केसे मुख पंछ सींग इत्यादि सहितकुं देव मानना, तथा त्रिमुख चतुर्मुख चतुर्मुज इत्यादिक प्रकट दिव्य देवके रूपरहित विकराल निनके रूप तथा लींग योनि इत्यादिक विपरीत रूप जिनकुं देखे लज्जा उपने तिनमें, देवत्वबुद्धि करें अर देव मानी पूजा वंदना करें, देवनिके अर्थि कररा मैसा इत्यादिकनिकुं मारि चढावे, तथा देवताने मध्यमांसके भक्षक जाने, सो समस्त तीव मिथ्यात्वके उदयतें देवमूढता कहिये हैं।

जे आरंभ परिग्रह हिंसाकरि सहित, पासंडी, कुलिंगी, विषयनिके छोछपी, अभिन्नानिक्रं गुरु मानी सत्कार वंदना पूजादिक करें; सो गुरुमूदता जाननी ॥ बहुरी ज्ञानका मद, कुछमद, जातिमद, बछमद, ऐश्वर्यमद तपोमद, रूपमद, शिल्पमद, ये आट मद सम्यक्तिक घातक हैं ॥ इंद्रियजनित विनाशिक ज्ञानमें अहंकार करना तथा जाति, कुछ, रूप, बछ, ऐश्वर्य ये कमेंके उदयनित हैं, तथा पर हैं, विनाशिक हैं, इनमें आपा घरना सो अष्ट मद मिथ्यात्वके उदयतें हैं ॥ तथा कुरेव, कुधर्म, कुगुरु, अर इनके सेवक तिनकुं अनायतन कहे हैं । रागी द्वेषी मोही तथा जे देवपणारहित

13

ये कुदेव, अर जामें तीन हिंसाकी प्रवृत्ति दयारहित सो कुथर्म, अर पिग्रहवारी विषयकवायके बशीमृत सो कुग्रह, तीन तो ये भये। अर कुदेव, कुथर्म, कुग्रह, इनी तीनिनके सेवन करनेवाले ये छद्दृही 'आयतन ' कहिये धर्मके स्थान नहीं हैं, तातें इनकुं अनायतन कहिये हैं। इनकी प्रशंसा करना, इनमें मले गुन जानना मिथ्यात्वके उदयतें हैं।।

बहुरि शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, मूटदृष्टिता, अनुपगूहन, अस्थितीकरण, अवात्पल्य, अप्रभावना ये आठ दोष सम्यक्तके हैं। इनिके प्रतिपक्षी अष्टगुण हैं। तिनमैं जो सर्वज्ञभाषित धर्ममें संशयका अभाव, सो निःशङ्कित है । सर्वज्ञ वीतरागही आराधनायोग्य देव है-अन्य रागी द्वेषी नहीं, रत्नत्रयके धारक विषयकषायनिके जीत-नेवाले नियंथ ही गुरु हैं-अन्य आरंभी परिप्रही नहीं, द्याभाव ही धर्म है-हिंसाभाव धर्म नहीं, देवगुरुके निमित्तकरि हुई हिंसा पापही फले है धर्मकं नहीं उपजावे हैं। ऐसैं देव-गुरु-धर्मके स्वरूपमें संशयरहित निःशंक प्रवर्ते ताकै निःशंङ्कित गुण होय है ॥ बहुरि इहलोकभय, परलोकभय, मरणभय, वेदनाभय, अनारक्षाभय, अगु-प्तिभय, अकस्माद्भय इनि सप्तभयनिकरि रहित निशंकित गुण होय है ॥ दराप्रकारके परिग्रहके वियोग होनेका भय, सो इस छोकका भय है। अर दुर्गति जानेका भय, सो परलोकका भय है। प्राण-निका नारा होनेका भय, सो मरणका भय है। रोगका भय सो वेदनाभय है । कोऊ हमारा रक्षक नही ऐसा अनारक्षाभय होय है । चोरनिका भय, सो अगुप्तिभय है। अचानक कोऊ आपत्ति द:ख

आवे ताका भय, सो अकरमाद्भय है। इनि सप्तभयनिका अभाव जाके होय, सो निःशंकितगुणका धारक नियमतें सम्यग्दृष्टि होय है॥

सम्यग्दृष्टि इस लोकके भयके जीतनेकूं ऐसे चिंतवन करे है—
नस्तों लगाय शिखापर्यंत समस्त देहकूं अवगाहन करि जो ज्ञान तिष्ठे
है, सो मेरा अविनाशी निज धन है, अनादिनिधन है, नवीन उत्पन्न
नही, अर अनंनकालमें विनसे नही, यह मेरे निध्य है, अर जो
धन धान्य स्त्री पुत्र परिवार कुटुंब राज्य संपदा हैं ते परद्रव्य हैं,
विनाशीक हैं, जहां उत्पत्ति है तहां प्रलय है, अर जिसका संयोग
है तिसका वियोग है, इनका मेरे अनेकवार संयोग भया अर वियोग
भया, जातें परिग्रहके नाश होतें मेरा नाश नही अर परिग्रहका उत्पाद
होतें मेरा उत्पाद नही—उत्पाद विनाश दोऊ परद्रव्यनिमें हैं तातें परद्रव्यका नाश होतें स्वभाव अचल है—नाश नही, ऐसे सम्यग्दृष्टि अपना
रूपकूं अखंद अविनाशी ज्ञाता दृष्टा देखे है—अनुभवे है। तातें
दशक्कारका परिग्रह विनशनेका भय—जो मेरी धनसंपदा, मेरा स्त्रीपुत्र कुटुंब, मेरा ऐश्वर्य मित कश्चित विनशि जाय ऐसें परिणाममें
रांका सो, इसलोकका भय ताकूं सम्यग्ज्ञानी नही प्राप्त होय है।

परलोकमें दुर्गति जानेका भय, सो परलोकभय है, सो सम्य-ग्टप्टीके नहीं है। सम्यग्टिष्ट ऐसा विचार करे है—ज्ञान है सो मेरा बसनेका लोक है, इस अविनाशी ज्ञानलोकहींमें मेरा निश्चल वसना है, अर जे नरक स्वर्ग मनुष्य तिर्यंच महादु:खनिके भरे लोक है सो मेरा लोक नहीं है—पुण्यपापातें उपज्या है, पुण्यका उदय होई तदि जीव शुभ-गतिकूं प्राप्त होय है, सुगति दुर्गति दोऊ विनाशिक हैं, कर्मकृत हैं, मै निदानंद नैतन्य ज्ञाताद्रष्टा अखंड शिवनायक कर्मतें भिन्न अपने ज्ञानलोकमें रहूं, ज्ञानलोकिवना अन्य मेरा लोकही नहीं, ऐसें चिंतन करते परलोकका भय नहीं होय है ॥ जो सुगतिदुर्गतिसंबंधी इदियजनित सुखदुःखमें आपा धारे है, ताक परलोकका भय है। अर जो निःशंक कर्मकलंकरहित अपना स्वरूपकूं अविनाशिक अखंड अनुमवे है, ताक परलोकका भय नहीं होय है।।

अब रोगकी वेदनाका भयकूं निराकरण करे हैं ॥ जो अचल निजज्ञानकूं वेदे है—अनुभवे है, सो वेदना है, सो अनुभव करनेवाला जीव अर जिस भावकूं वेदे है—अनुभवे है सोहू जीव है, जो अपने स्वभावकूं वेदना—अनुभवना सो वेदना तो अविनाशीक है, मेरा रूप है, सो देहमें नही है। अर जो कर्मकरि करी हुई सुखदु:खरूप वेदना है सो मोहका विकार है, पुद्रलमें है, विनाशिक है, देहमें जाकै ममता है ताक है। अर देहका घात करनेवाले रोगादिक ते देहमें हैं, देहका नाश करेगा। में ज्ञाता दृष्टा अमूर्तिक अविनाशी ताका एक प्रदेशकूं चलायमान करनेकूं समर्थ नही है। ऐसें देहतें अर देहमें उपजी वेदनातें अपने स्वरूपकूं असंड अविनाशी अनुभवे है, ताक वेदनाभय नही प्राप्त होय है।

अन मरणभयका निराकरण करे हैं ।। प्राणनिके नाशकूं मरण किहये हैं । सो पंच इंद्रिय, मनोचल, वचनवल; कायवल, आयु, श्वासोश्वास ये दश प्राण हैं, सो देहके हैं । विनाश होतें इनका देहका विनाश होय है । ज्ञानप्राणसंयुक्त अमूर्त असंड ऐसा मै आत्मा, तिसका नाश नहीं है। ऐसें देहतें अर देहननित मूर्तिक विनाशिक दश- दिगंबर जैन ।

प्राणिनतें आपकूं भिन्न अनुभवे है, ताके मरणका भय नहीं होय है। जो

प्राणानत् आपक् भिन्न अनुभव है, ताक मरणका भय नहीं होय है। ना मूद देहका मरणके आत्माका मरण होना अनुभवे हैं, ताक मरणका भय होइ। यातें सम्यान्दृष्टि अपने आत्माके ज्ञान दर्शन सुख सत्ता इत्यादि भवप्राणहूप अनुभवे, ताक मरणभय नहीं होय है।।

अब कोऊ हमारा रक्षक नहीं ऐसा अनारक्षा भयकूं कहे हैं।।
जगतिवेषे जो सत् है तिसका विनाश नहीं है ऐसे बस्तुकी स्थिति
प्रकट है । सत्का विनाश नहीं असत्का उत्पाद नहीं।
मेरा ज्ञान सत् है, सो तीन कालमें इसका नाश हैं नहीं, ऐसा
मेरे निश्चय है। यातें मेरा चैतन्यस्वभावका अन्य कोऊ रक्षक नहीं,
अर अन्य कोऊ भक्षक नहीं, पर्याय उपने हैं पर्याय विनसे हैं।
मेरा स्वभाव पुद्गलपर्यायतें भिन्न अविनाशी ज्ञानमय है, याका
रक्षक मक्षक कोऊ है नहीं। ताते सम्यग्टिष्ट निःशंक निर्भय
अपना ज्ञानमय निजस्वभावकूं वेदे है—अनुभवे है।।

चोरका भय सो अगुप्तिभय है, ताहि जनावे है, । जो वस्तूका निजस्वरूप है सोही सर्वोदकृष्ट गुप्ति है । अपना निजस्वरूप-विषें कोऊ परद्रव्य प्रवेश करनेकूं अशक्त है, मेरा सर्वोदकृष्ट चैतन्य स्वरूप है, अन्य कोऊ इसमें प्रवेश नहीं करि सके है । अर मेरा चैतन्य रूप कोऊ इसनेकूं समर्थ नहीं है, मेरा स्वरूप अक्षय अनंतज्ञानस्वरूप अविनाशि धन है, तिसकूं चोर कैसे ग्रहण करे ? इसमें कोऊ अन्यद्रव्यका प्रवेशही नहीं, ज्ञान—दर्शन—सुख—वीर्यरूप मेरा अविनाशी धन कोऊ इरनेकूं समर्थ नहीं । ऐसे अनुभव करता निःशंक निर्मय अपने ज्ञानस्वभावमें तिष्ठते सम्यग्दृष्टीकै अगुप्तिभय नहीं होय है ॥

### आराधनास्वरूप ।

अब अकस्माद्भयकूं निराकरण करे हैं ॥ मेरा स्वरूप स्वभाव-हीतें शुद्ध है, ज्ञानस्वरूप है, अनादिका है, अविनाशी है, अचल है, एक है, इसमें दूजेका प्रवेश नहीं है, जैतन्यका विलासरूप समस्तद्रज्यनिका नामें प्रकाश हो रह्या है, अर समस्तविकल्परहित अनंतसुखका स्थान है, तिसमें अचानक कुछ होना नहीं है। तातें ज्ञानी सम्यग्दृष्टि अपना स्वरूपमें अनंतानंत काल होतेंहूं द्रज्यकृत भावकृत कुछहू उपद्रव होना नहीं माने हैं। केवल ऐसा साहस सम्यग्दृष्टि जीवहीं करनेकुं समर्थ है। जो भयकरिकें चलायभान जो त्रेलोक्य तानें छांडी है प्रवृत्ति जातें ऐसा वज्रपातकुं पडतेंहू अपने स्वभावकी निश्चलताकरिके समस्तही शंकाकुं त्यागिकरिके अर अपना स्वरूपकुं अविनाशी ज्ञानमय जानत है अर ज्ञानतें नहीं च्युत होय है। भावार्थ—ऐसा वज्रपात पढें! जो लोक चालते हालते खाते पीते जैसेके तैसे अचल रहिनाय ऐसा भयंकर कारण होतेंद्ध जो अपना ज्ञानमय आत्माकुं अविनाशी ज्ञानता भयकुं नही प्राप्त होय, तिसके निःशंकित अंग होय है।।

बहुरि इंद्रियजनित सुखमें जाके अभिलाष नहीं, धर्मसेवनकरि धर्मके फलकूं नहीं चाहै, सो निष्कांक्षित गुण है। जातें सम्यादृष्टीकूं इंद्रियनिके विषयजनित सुख दु:खरूष भासे हैं। कैसे हैं विषयनिके सुख १ कर्मके परवशी हैं, पुण्यकर्मका उदय होइ तदि विषय मिले हैं, बहुरि मिले तोहू थिर नहीं हैं—अंतसहित हैं, बहुरि बीचिबीचि इष्टवियोगादिक अनेक दु:खनिके उदयकरि सहित हैं, पापका बीज हैं। ऐसें इंद्रियजनित सुखमें वांछाका अभाव सो निष्कांक्षित अंग है।

बहुरी रोगी दरिद्री देखि ग्लानि नहीं करै, तथा आपके अशुभ कर्मका उदय देखि ग्लानि नहीं करें तथा पुद्रलनिकी मलिनता देखि ग्लानि नहीं करें, जातें देह तो रोगमय है अर कर्मके उदयकी अनेक परि-णति हैं, पुद्रलनिके नाना परिणमन हैं, इनके परिणमन देग्दि राग-द्वेषकरि परिणामकूं मलीन नहीं करें, ताके निर्विचिकित्सा अंग होइ॥

बहुरि नो भयतें लजातें लानतें हिंसाके आरंभकूं धर्म नहीं माने अर जिनेंद्रकी आज्ञामें लीन हुना मिध्यादृष्टि एकांतीनिका चलायमान कीया तत्त्वतें नहीं चले, सो अमूदृदृष्टि नामा अंग है।। तथा मिथ्यादृष्टीनिका प्ररूप्या एकांतरूप कुमार्ग तथा कुमार्गीनिका आचरण कुमार्गीनिका ज्ञान ध्यान तप त्याग देखि मन-बचन-कायकरि प्रशंसा नहीं करे। तथा मंत्र यंत्र तंत्र पूजा मंडल होम पज्ञादिककरि तथा व्यंतरादिकदेवनिकी पूजा करी तथा गृहादिक्रितिकी पृज्ञदिककरि अशुभकर्मका अभाव होना अर साताका उद्य होनेका श्रद्धान नहीं करें। जातें अशुभकर्मका अभाव होना अर साताका उद्य होनेका श्रद्धान नहीं करें। जातें अशुभकर्मका अभाव होना अर साताका उद्य होनेका श्रद्धान नहीं करें। जातें अशुभकर्मका अभाव होना अर क्षांच्या हुना कर्म आपके शुद्ध परिणाम करिही निकेंगे, और कोऊ दृरि करनेकुं समर्थ नहीं है। ऐसा इद श्रद्धान सो अमूदृदृष्टि है।।

बहुरि जो परके दोषकूं आच्छादन करै—इाके अर अपना मला कर्तव्य तिसका प्रकाश नहीं करें। जातें संसारी जीव रागद्देषके वशीभूत हैं, अपना आपा भूलि रहे हैं, परमार्थतें पराङ्मुख हैं, स्वरूपका अवलोकनरहित हैं, ज्ञानावरणकरि आच्छादित हैं तातें परवश हुवा दोषरूप प्रवर्ते हैं, इनका दोष प्रकट कीये अवज्ञा होयगी; तथा यो धर्ममें प्रवर्ते हैं, धर्मकी हास्य होयगी; तातें परके दोवकूं ढाकै अर अपनी क्टाई नही करें "में केवल-ज्ञानरूप परमात्मरूप होइ विषयकपाननिमें फिस रह्या हूं!" ऐसें आत्मिनिंदा करें, अर जैसें सर्वज्ञभगवान् देख्या है तैसें होयगा ऐसें भवितव्यभावनामें रत होइ, ताके उपगृहन अंग होइ है।।

कोऊ पुरुष रोगकरि वा उपसर्गकरि वा क्षुधातृषाकी वेदनाकरि वा वत पालनेमें शिथिलताकरि तथा असहायताकरि तथा निर्धनता-करि मुनिधर्मतें वा श्रावकर्धमेतें चलायमान होता होय ताकूं धर्मीप-देश देनेकरि तथा शरीरकी टहल चाकरी करि वा औषध मोजन-पान देनेकरि वा निराकुल वसतिका वा गृहादिक देनेकरि वा उपद-वादिक दूरि करनेकरि धर्ममें संभ करे, धर्मतें चलवा नही दे, ताकै स्थितीकरण अंग है।

बहुरि जो धर्मविषें वा धर्मात्मा पुरुषिषें वा धर्मायतन कहिये जिनमंदिर जिनधितमाविषें वा सत्यार्थधर्मके प्ररूपक जिनेद्रका आग-मके पटनविषें श्रवणविषें उपदेश देनेविषें जिनके अत्यंत प्रीति होय ताके वात्सल्य अंग होय है ॥

संसारी जीवनिकै अपनी स्वीविषे वा पुत्रादिककुटुंबिवेषे वा वनपरिग्रहादिकविषे तीव अनुराग लगि रह्या हैं, धर्ममें धर्मात्मापुरुष-निर्मे राग नही है, सत्यार्थ स्वपरका निर्णय करि जो [परमधर्मकुं जाणे चतुर्गतिका दुःखमुं भयभीत होय, अर जाकूं विषय विषसमान भारते अर आत्मिकसुख जाकुं सुख दीखे, ताकै धर्ममें वात्सल्य होय है॥ बहुरि अपने आत्माके मांहि अनादिके मिथ्यात्वादिक मल रागादिक कामादिक मल तिनकूं दूरि करि अपने आत्माका प्रभाव रत्नत्रय धारणकरि प्रकट करना, सो प्रभावना नाम अंग है ॥ तथा दान तप जिनपूना त्याग इत्यादिकरि जिनधर्मका प्रभाव नगतमें प्रकट करे, मिथ्यादृष्टीहू देखि प्रशंता करे " जो, ऐसा शील जैनीहीके होय, जिनका निर्लोभपणा, द्यालुपणा, दातारपणा, क्षमावान्पणा, तथा त्याग, वैराग्य, शील, संयम, सत्य इत्यादिक देखि बालगोपालहू महिमा करे, " ताके प्रभावना अंग होइ है ॥ जो महावत अणुवत धारे, सो प्राण जातेंहू हिंसा, झूठ, परधनहरण, कुशील, परिप्रहमें नही प्रवृत्ति करे ऐसा धर्मका महिमा प्रकट दिखावे, अपनी मन—वचन—कायकी प्रवृत्ति करि धर्मकी निंदा नहीं करावे, अर अभ्यंतर अपने आत्माकूं मिथ्यात्वादिकनितें मिलन नहीं होने देवे, ताके प्रभावना नाम अंग होय है ॥ ऐसें सम्यक्त्वके अष्ट गुण कहे ॥ कार्तिकेयस्वामीने ऐसें कह्या है—

जो ण कुणदि परतत्ति । पुणुपुणु भावेदि सुद्धमप्पाणं ।। इंद्वियसुद्दणिरवेद्ध्वो । णिस्संकाई गुणा तस्स ॥१॥

अर्थ--- जो जीव परकी निंदा नहीं करे है, अर वारंवार रागादिरहित शुद्ध आत्माकूं भावे है-अनुभवे है, अर इंद्रियजनित-सुखमें जिनके वांछाका अभाव है, तिनके निःशंकितादि गुण जानिये है ॥

ओरहू प्रशाम, संवेग, अनुकंषा, आस्तिक्य ये सम्यवग्वके छक्षण हैं ॥ संवेग, निर्वेग, निर्दा, गर्हा, उपशाम, भक्ति, अनुकंषा

### आराधनास्वरूप ।

ये सम्यक्त्वके अष्ट गूण हैं ॥ धर्ममें अत्यंत अनुराग होना, सो संवेग है ॥ संसार देह भोगनितें विरक्तता, सो निवेंग है ॥ आपका दोष चिंतवन करि अंतःकरणमें आपकी निंदा करनी, अपना प्रमादीपणा विषयानुरागीपणा क्षायनिके आधीनपणा संयमरहितपणा देखि आपाकूं निंदना, सो निंदा है ॥ गुरुनिके निकट अपने दोष प्रगट करि आपकी निंदा करना, सो भक्ति है ॥ बहुरि धर्मात्मा जीवनिमें प्रीति करना, सो अनुकंपा है॥ जाकै सम्यग्दर्शन होइ ताकै ये अष्टगुण प्रकट होयही हैं ॥ ऐसें सम्यक्त्वका संक्षेप वर्णन कीया॥ सम्यग्दर्शनसहित एक देशवतकूं धारण करि मरण करे है सो बाल पंडित मरण है अब गृहस्थक देशवत केंसे है, सो कहे हैं ॥ गाथा—पंच य अणुव्वयाइं । सत्त य सिख्यस्वाउ देसजदिधममो ॥ सन्वेण य देसेण य । तेण जुदो होदि देसजदी ॥२०७५॥

अर्थ-- पंच अणुत्रत अर सप्त शिक्षात्रत ये बारा व्रत देशयति जो एकदेशव्रती ताका धर्म है। जो श्रावक ये बारा व्रत समस्तपणाकरि वा इनिका एकदेशकरि जो युक्त होय, सो श्रावक एकदेश यति वा एकदेश संयमी वा व्रती होइ है॥ अब पंच अणुव्रत तिनके नाम कहे हैं॥ गाथा--

पाणिवधमुसावादा । दत्तादाणपरदारगमणेहिं ॥ अपरिमिदिच्छादो विय।अणुव्वायाइंविरमणाइं॥७६॥

अर्थ—हिंसा, असत्य, अदत्तादान, परदारागमन परिमाणरिहत परिग्रह इनि पंच पापनिका एकदेशत्याग, सो पंच अणुत्रत है।। अब तीन प्रकार गुणत्रतके नाम कहे हैं।। गाथा—

# दिगंबर जैन ।

जं च दिसावरमणं । अणत्यदंडेहि जं च वेरमणं ॥ देसावगासियं पि य । गुणन्वयाइं भवे ताइं ॥ ७८ ॥

अर्थ--नो मरणपर्यंत दश दिशानिमें गमनादिककी मर्यादा करना, सो दिग्विरित कत है। अनर्थदंडिनका त्याग, सो अनर्थदंडिनरित कत है। अर कालकी मर्याद किर क्षेत्रमें गमन करनेकी मर्यादा, सो देशावकाशिक है। ऐसे तीन गुणकत हैं॥ अन च्यारिप्रकार शिक्षावतिक के है। गाथा-

भोगाणं परिसंखा । सामाइयमतिहिसंविभागो य ॥ पोसहविश्री य सन्त्रो । चदुरो सिख्खाउ वत्तार्ड ॥ ७८ ॥

अर्थ—भोगोपभोगकी मर्यादा, सो भोगोपभोगपरिमाणवत है। सामायिककी प्रतिज्ञा करना, सो सामायिक नाम शिक्षावत है। च्यारि पर्वनिमें उपनासादिक प्रोषघ निधि करना, सो प्रोषघो-पन्नास नामा शिक्षावत है। ऐसे च्यारि शिक्षावत कहे॥ पंच अणुवत, तीन गुणवत, च्यारि शिक्षावत ऐसे ये बारह वत गृहस्थ अनस्थामें श्रावकके कहे॥

इहां ऐसा विशेष जानना—सम्यग्शनका धारक जीवकें समस्त ब्रतादिक होइ हैं। तातें जो पहली जिनेंद्रभाषित सूत्रकी आज्ञाप्रमाण तत्त्वार्थनिका श्रद्धानस्वरूप सम्यग्दर्शन धारण करिकें; अर जो जूबा, मांस, मद्य, वेश्या, शिकार, चोरी, परली इन सात व्यसनका त्याग; अर पंच उदुंवरफलादिकका त्याग; तथा जिनमें ब्रस्जीवनिकी उत्पत्ति ऐसा बीजफलादिकका त्याग करे हैं; सो दर्शनप्रतिमाका धारक श्रावक हैं।

आराधनाम्बरूप ।

बहुरि नो विशुद्धता वधि जाय तो व्रत नामा दूसरी प्रतिमा, तिसमें बारा वत धारण करे है । तिन व्रतनिका ऐसा संक्षेप है-जो अपनी बुद्धिपूर्वक नियम करना, सो ब्रत है। तिनमें जो अपने संकल्पतें त्रसनीवनिकी हिंसा करनेका त्याग करै: मन वचन कायके संकल्पकरि त्रसजीवनिका वात नहीं करै: अन्यतें मन वचन कायकरिकें नहीं करावै; अन्य करता होय तिसकूं मन वचन कायकरि भला नहीं जानै-प्रशंसा नहीं करें; रोगादिककी पीडाकरि वा धनके लोभकरि वा भयकरि, वा लज्जाकरि, कदाचित् अपना प्राण जाय तोह वे इंद्रियादिक त्रमका घात नही करै; जातें गृहस्थकै एकेंद्रियकी हिंसाका त्याग तो बिण सकै नहीं; नाकी चूला उखणी, भुवारी, परीडा, अर द्रव्यका उपार्जन ये छ कर्म पापहीके हैं, तातैं पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, पवनकाय, वनस्पतिकाय इनिके आरंभमें तो अत्यंत घटाय यत्नाचारपूर्वक प्रवर्तन करे; अर संकल्पी त्रसहिंसाका त्याग करै; अर आरंभमें यत्नाचारपूर्वक प्रवर्ततेह जो कदा-चित् विरायना होड़ तो आपकै संकल्प है नहीं, कोऊ लाख धन देकरि एक कीडीकूं मरावै, वा भयकरि मरावै, तो प्राण जावो! वा धन जावो! परंतु अपने संकल्पतें एक जीवकुं नहीं मारै; ताक अहिंसा नामा अणुत्रत होय है ॥ जातें रागादिकनिकी उत्पत्ति सो हिंसा है, अर रागादिकनिकी उत्पत्तिका अभाव, सो अहिंसा है। जो वीतरागताक नहि विस्मरण होता निरंतर यत्नाचाररूप प्रवर्ते अर द्याधर्मक्रं एक क्षण विस्मरण नहीं होय. ताकै अहिंसा नाम अणुवत है ॥

बहुरि जो हिंसाके करनेवाले बचन नहीं बोले, वा कर्करा वचन नहीं कहै, वा अन्यके दुःख उत्पन्न करनेवाला सत्य वचनहू नहीं कहै, अन्यकूं असत्यवचन नहीं बुलावे, तथा नो वचन कहैं सो समस्त छ कायके जीवनिके हितरूप कहैं अर प्रमाणीक कहै, अर समस्त जीवनिके संतोष करनेवाला वचन कहैं, अर धर्मका प्रकारा करनेवाले वचन कहैं, ताके सत्य नामा अणुवत होइ है ॥

बहुरि विनादिया धनका ग्रहण करना, सो चोरी है। यातें कोऊ आपमें धन स्थाप्या होइ, वा कोऊ नगर ग्राम उपवनमें पड्या होइ, वा कोऊ भूमीमैं पटिक गया होइ, वा आपकूं सोपि भूलि गया होइ, ऐसा परधनका जो त्याग करें, सो अचौर्य नामा अणुवत है। तथा बहुत मोलकी वस्तु अल्पमोलमें नहीं ग्रहण करें, अर गिन्या, पड्या, भृल्या, विस्मरण हुना परके वस्तूको नहीं ग्रहण करें तथा अल्प लाममें संतोष करें, ताक अचौर्य नामा अणुवत है।

बहुरि जो अपनी विवाहिता स्त्रीविना अन्य समस्त स्त्रीनिका त्याग करे, ताँके ब्रह्मचर्य नाम अणुत्रत है। बहुरि जो धनधान्या-दिक समस्त परिग्रहका परिमाण करि तिसतें अधिकमें तृष्णाका अभाव करि संतोष धारण करे, तांके परिग्रहपरिणाम नामा अणुत्रत होय है॥ ऐसें पंच अणुत्रत कहे।।

बहुरि लोमके नाराके अधि जो यावज्जीव दरा दिशानिका परिमाण, सो दिग्वरितवत है। बहुरि जिसतें आपका कार्य तो कुछहू सिद्ध नही होय अर जातें नित्य पापकर्मका बंध होइ, सो अनर्थदंड अनेकप्रकार है। तथापि सामान्यपणाकरि पंच मेद कहे हैं। पापोपदेश, हिंसादान, अपन्यान, दृःश्चितसेवन, प्रमादचर्या ये पंच-

प्रकार अनर्थदंडके नाम हैं। तिनमें जो खेती करनेका, पशु पालनेका, पापके विणजका, तिर्यंच मनुष्यनिकूं मारनेका, दृढ बांधनेका, पुरूपस्त्रीनिके संयोगका, तथा छह कायके जीवनिका घात जातें होय ऐसा उपदेश करना, सो पापोपदेश नामा अनर्थदंड है।

बहुरि हिंसाके उपकरण ने खड्ग, वाण, छुरी, कटारी, फावडा, खुरपा, कुंदाल, विष, अग्रि, रस, नेवडा, वेडी, सांकल, चावका, नाल, पींजरा इत्यादिकका देना, सो हिंसादान नामा अनर्थदंड है। तथा मार्जार, कुंकरा, तीतर, कूंकडा इत्यादिक मांसभक्षी जीवनिका पालना तथा आग्रुधनिका वेचना, लोहका विणज करना, तथा लाल खि इत्यादिक " जिवनिकी हिंसा जिनतें प्रवेतें तिनका" विणज व्यवहार करना; सोहू हिंसादान नामा अनर्थदंड है।।

बहुरि जो रागी द्वेषी हुवा अन्यजीवनिके स्त्रीपुत्रादिकनिका मरण चाहना; तथा अन्यजीवनिके राजाकिर कीया तीत्रदंड, वा सर्वस्वरण, वा चौरादिककिर घनका नाश, तथा जगतमें अपवाद, कलंक इत्यादिककी वांछा करना; तथा अन्यजीवनिका अंगका छेद, बुद्धीका नाश, मारण, ताडनकी चाह करना; परका उद्य देखि हेशित होना, अन्यके आपरा आजाय वा अपमानादिक होय तदि आनंद मानना; सो अपध्यान नामा अनर्थदंड है ॥ तथा अन्य मनुष्य तिर्यंचिकिश राडि कल्ल देखना वा देखिकिर हर्ष मानना, अन्यजीविकिश देष प्रहण करना, परकी धन संपदा देखि वांछा करना, अन्यकी स्त्रीका देखनेमें अनुराग करना, आपका अभिमानकी वृद्धि चाहना, परका अपमान चाहना इत्यादिक अपध्यान नामा अनर्थदंड है ॥

बहुरि जिस शास्त्रमें हिंसामैं धर्म कह्या; तथा जिनमें भंडकथा, कामकथा, वशीकरण, कपट, छल्वर्णन, तथा युद्धशास्त्र तथा रागद्वेष मिथ्यात्वके वधावनेवारे खोटे शास्त्रनिका श्रवण करना; सो दुःश्रुति नाम अनर्थदंड है ॥ बहुरि जो प्रयोजनविना दोडना, कूटना, जलकुं सीचना, काटना, विनाप्रयोजन अभिका बधावना, पवनका उडावना, वनस्पतीका छेदना इत्यादिक निष्कल्ल्यापार—प्रवृत्ति करना, सो प्रमाद्वर्षी नामा अनर्थदंड है ॥ ऐसे पंचप्रकारके अनर्थदंडनिका छोडना सो अनर्थदंडत्याग नामा दूसरा गुणवत है ॥

बहुरि जो यावज्जीव दशदिशामें गमनका प्रमाण कीया, सो तो दिग्विरतिवृत है। तिसमें जो दिनप्रति मर्याद करें—जो मै आजि इतनी दूरही गमन करूंगा ऐसे जो कालकी मर्याद करि गमनका परिमाण निति करें—ताक देशावकाशिकाशिकवत किहेये हैं ॥ बहुरि अपनी भोगोपभोगसंपदाकूं जाणिकरिक अर रागभावक घटावनेकूं जो इंद्रियनिक विषयनिका परिमाण करें, ताक भोगोपभोग नामा शिक्षावत है ॥ तिनमें मद्य, मांस, मधु, नवनीत जो छुण्यो, कंद्र, मूल, हल्द्र, आदो, निंव, केवडा, केतकी इत्यादिकनिक पुष्प इनिमें तो नियम नही; ये तो बहुत त्रसजीवनिका स्थान करें, तातें यावज्जीव त्याग करना उचित है । अर जो आपके उदरशूलादिक दुःख करनेवाला जो प्रकृतिविरुद्ध है, ताका त्याग करें । जातें जो अपने दुःख होना, रोगका बधना, मरण होना, इनकूं नही गिणता जिल्हा इंद्रियका लोलपी होइ प्रकृतिविरुद्ध आहार करें है, ताक तीवरागजनित अशुमकर्मका बंध होय है ॥

#### आरोधनास्वरूप ।

बहुरि जिसमें जीवनिकी विराधना तो नही, परंतु उत्तमकुलमें प्रहणयोग्य नही, ते अनुपसेव्य हैं। जातें शंखचूर्ण, गजके दंत, औरहू हाड, गायका मूत्र, उंटका दुग्ध, तांबूलका उद्गाल, मुखकी लाल, मूत्र, मल, कफ, तथा उच्छिष्ट भोजन, तथा अशुद्धभूमिमें पड्या भोजन, तथा मलेड्डादिकनिकरि स्पर्श्या भोजन, तथा अस्पृश्य शुद्धका ल्याया जल, तथा श्रुद्धादिकका कीम्रा भोजन, तथा अस्पृश्य शुद्धका ल्याया जल, तथा श्रुद्धादिकका कीम्रा भोजन, तथा अस्पृश्य श्रुद्धका ल्याया जल, तथा श्रुद्धादिकका कीम्रा भोजन, तथा अस्पृश्य श्रुद्धका ल्याया जल, तथा श्रुद्धादिकका कीम्रा भोजन, तथा अस्पृश्य श्रेष्ठ प्राप्त भोजन जलादिक अनुपसेव्य हैं। यद्यपि प्राप्तुक होइ हिंसारहित होइ तथापि अनुपसेव्यवणातें अंगीकार करनेयोग्य नही है बहुरि विकार करनेवाला भेष, वस्त्र, आभरण, नीच पुरूषिनके योग्य, रागकारी कामादिकके बधावनेवाले चित्राम, गीत, नृत्य, भंडवचनश्रवण इत्यादिहू अनुपसेव्य हैं॥ तातें अनिष्ट अर अनुपसेव्यकूं वर्जन करिके जो न्यायोपार्जित त्रसजीवनिकी विराधनारहित भोजनादिक भोग अर वस्त्रादिक उपभोग, तिनभें प्रमाण करि अगीकार करै, तिसके भोगोपभोगपरिमाण नाम वत हैं.

जो एकवार भोगनेंमें आवे, सो तो भोजन, जल, पुष्प, गंध-विलेपनादिकनिकुं भोग किहये हैं। अर जे वस्त्र, आभरण, स्त्री, शयन, आसन, असवारी, महल, इत्यादिक वारंवार भोगनेयोग्य ते उपभोग हैं। तिन भोगोपभोगका यावज्जीव त्याग करना, ताकुं यम किहये हैं। अर जो एकदिन, दोयदिन, वा रात्रि, वा पक्ष, मास, जतुर्भास, एक वर्ष इत्यादिक कालकी मर्यादारूप त्याग करना, सो नियम है। तिनमें अयोग्य अनुपसेन्य असनिका घात करनेवाले भोजनका तो याव ज्ञीव त्याग करी यमही करै। अर योग्यविषयिनिमैं कालकी मर्यादपूर्वक त्याग करि नियम घारै॥ ऐसैं समस्त पंच इंद्रियनिके विषयिनिभैं यमनियम करै, सो भोगो-पभोगपरिमाण नामा शिक्षावत है॥

बहुरि जिनके पुण्यके उदयतें नानाप्रकारकी भोगोपभोगसामग्री वरमें मौजूद तिष्ठे है, तिनमेंतें अल्प ग्रहण करि बहुतका त्याग करे हैं अर आगामी कालमें भोगोपभोगकी बांछारहित हैं अर वर्तमान कालमें कर्मके उदयतें भोगनेमें आवे है, तिनमें अति उदासीन हुवा मंदरागसहित भोगे हैं, तिनके ब्रत इंद्रनिकिर प्रशंसायोग्य समस्त कर्मकी स्थितिका छेद करे हैं॥

बहु समस्त चेतन अचेतन द्रव्यनिविधें रागद्वेषको त्याग किर साम्यभावकूं आलंबन करिके अर प्रातःकाल अर संध्याकालके विधें अविचल मन—वचन—कायकूं किर अवस्य नित्यही सामायिकका अवलंबन करना, सो सामायिक नामा शिक्षावत है। सो सामायिक करनेके अधि क्षेत्रशुद्धता देखनी। जहां कलकलाट शब्र नहीं होय, जहां स्त्रीनिका आगमन नहीं होय, नपुंसकिनका प्रचार नहीं होय, तिर्यंचिनका संचार नहीं होय, वा गीत तृत्य वादित्रादिकिनिका शब्दरहित कलह विसंवादरहित होय, तथा जहां ढांस मांछर मांसी बीळू सर्पादिकिनिकी बाधारहित, शीत उष्ण वर्षा पवनादिकके उपद्वरहित,एकांत अपने गृहमें निराला प्रोषधोपवास करनेका स्थान होइ, वा जिनमंदिरमें वा नगरप्रामबाळ वनका मंदिर वा मठ मकान सूना गृह गुफा बाग इत्यादिक बाधारहित क्षेत्र होइ तहां सामायिक करनेकुं तिष्ठे॥

बहुरि प्रातःकाल वा मध्याह्नकाल तथा संध्याकाल इन तीन कालनिमें समस्त पापिकयाको त्याग करिकै सामायिक करें । इतनें कालपर्यंत में समस्त सावद्ययोगका त्यागी हूं; इनि कालनिविषें भोजन, पान, विणन, सेवा, द्रव्योपार्जनके कारण लेण देण, विकथा आरंभ, विसंवादादिक समस्तका त्याग करें॥ सामायिकके अर्थि काल दे देवै तिन कालनिमें अन्यकार्यका त्याग करें॥ बहुरि सामायिकके अवसरमें आसनकी दृढता करें। जो पूर्वें अपने स्थिर आसनका अभ्यास नहीं करि राख्या होय तासु लोकिक कार्यहीं नहीं होय तो परमार्थका कार्य कैसें बने! तार्तें आसनकरि अचल होइ तिसहीके सामायिक होय है॥

बहुरि सामायिकका पाठ वा देववंदना वा प्रतिक्रमणादिकके पाठके अक्षरिनमें, वा इनके अर्थमें, वा अपने स्वरूपमें, वा जिनेंद्रके प्रतिविंवमें, वा कर्मनिके उद्यादिकस्वभावमें चित्तकूं लगाय, अर इंद्रियनिका विषयनिमें प्रवृत्तिकूं राकिकरिके मन—वचन—कायकी शुद्धता करि सामायिक करे तथा शीत उष्ण पवनकी बाधा, डांस, मांछर, मिसका, कीडा, कीडी, बींछू, सर्पादिककरि आया परीषहते चलायमान नहीं होइ; तथा दुष्ट व्यंतरदेवादिक अर मनुष्य अर तिर्यंच अर अचेतनकृत उपसर्गकूं समभावनिकरि सहै चलायमान नहीं होय—परिणाममें सकंप नहीं होय—देह चल जाय तोद्दू जिनका परिणाम क्षोभकूं नहीं प्राप्त होइ, ताके सामायिक नाम शिक्षात्रत होय है।

बहुरि जो अष्टमी चतुर्दशी एकमासमें च्यारि पर्व तिनमें उपवास प्रहण करै; च्यारिप्रकारका आहारका त्याग, अर स्नान,

## दिगंबर जैन ।

विलेपन, आमूषण, स्त्रीनिका संसर्ग, अत्तर, फुलेल, पुष्प, धूप, दीप, अंजन, नाशिकामें सूंघनेकी नाश, तथा विणज व्यवहार, सेवा, आरंभ, कामकथा इत्यादिकनिका त्याग करि धर्मध्यानस-हित रहे अर व्यारिपकारका आहारका त्याग करे, ताक प्रोप-धोपवास होय है।

तथा स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा नाम प्रथमें ऐसें कह्या है-जो एकवार भोजन करै वा नीरस आहार वा कांजिका करै, ताकैह प्रोषधोपवास नामा शिक्षात्रत है।। बहुरि जो उत्तमपात्र जो मुनि अर मध्यमपात्र अणुत्रती गृहस्थ अर जघन्यपात्र अत्रतसम्यग्दृष्टि गृहस्थ तिनके अर्थि जो भक्तिसहित दान करे है, ताकै अति-थिसांविभाग त्रत है ॥ आहारदान, औषधदान, बसतिकादान ये च्यारिप्रकार दान करना, सो भक्तिपूर्वक करना। राग, द्वेष, असंयम, मद, दु:ख, भयादिक जिस वस्तुतैं नहीं होय; सो वस्तु संयमीनिके अर्थि दान देनेयोग्य है॥ वैयावृत्य अर दान एक अर्थ है। जो तपस्वीनिका सरीरका टहल करना, सो वैयावृत्त्य है; तथा अरहंत भगवानका पूजन सो अर्हह्रैयावृत्त्य है: जिनमंदिरकी उपासना करना वा उपकरण चमर छत्र सिंहासन कलशादिक जिनमंदिरके अर्थि देना, सो समस्त जिनमंदिरका वैयावृत्य है; सो महान् दान है। सो वडा आदरपूर्वक करना। ऐसैं दानका प्रकार समस्तही वैयावृत्यमें जानना ॥ ऐसे संक्षेपकरि श्रावकके बारह व्रत कहे वा इनके अतीचार कहे सो श्रावका-चारादिक मंथानेमें प्रसिद्ध है। इनि बारहप्रकार त्रतानेक् धारै सो दूसरी पैडीका धारक व्रती श्रावक है ॥

जातें जो सम्यग्दर्शनकिर शुद्ध हुवा संसार देह भोगनितें विरक्त, अर पंचपरमगुरुका शरण महण करता, सप्तव्यसनका त्याग किर समस्त रात्रिभोजनादिक अमध्यका त्याग करें, ताके दर्शन नामा प्रथम स्थान है ॥ बहुरि पंच अणुत्रत, तीन गुणत्रत, च्यारि शिक्षात्रत इनि बारहत्रतनिक् धारण करें सो त्रती श्रावक दूसरा पदका धारक है ॥ बहुरि तीनकाल साम्यभाव धारण करि सामायिकका नियम करें, सो सामायिक पदवीका धारक तीजा भेद है ॥ बहुरि एकएक मासविषें च्यारिच्यारि पर्विवेषें जो अपनी शक्तीकूं नहीं छिपाय करिके जो प्रोषधापवास धारण करें, ताके चोथा प्रोपधस्थान है ॥ याका विशेष ऐसा—

जो सप्तमी वा त्रयोदशीके दिन मध्याह्नकालपहली भोजन करिके, अर पाछ अपराह्मकालविषें जिनेंद्रके मंदिरमें जायकरिके, अर मध्याह्मसंबंधी किया करिके, च्यारिप्रकारके आहारका त्याग करि उपवास प्रहण करे, अर समस्त प्रहके आरंभका त्याग करि जनमंदिरमें वा प्रोषधोपवासके गृहमें वा वनके चैत्यालयमें वा साधुनिके निवासमें समस्त विषयकषायका त्याग करिके सोलह प्रहर्पर्यंत नियम करे, तहां सप्तमी लयोदशीका अर्धदिन धर्मध्यान स्वाध्यायतें व्यतीत करि अर संध्याकालसंबंधी सामायिक वंदना-दिक करि रात्रिनें धर्मीचंतन धर्मकथा पंचपरमगुरुके गुणनिका समरणादिककरि पूर्ण करिके, अर अष्टमीचतुर्दशीके प्रातःकालमें प्रभातसंबंधी किया करिके, अर समस्तादिवसक् शास्त्रके अभ्यासतें व्यतीत करिके, वर्र संध्याकालमें देववंदना करिके, अर रात्रिकं व्यतीत करिके, अर रात्रिकं व्यतीत करिके, अर रात्रिकं व्यतीत करिके, अर रात्रिकं व्यतीत करिके, अर रात्रिकं

तैसेंही धर्मध्यानतें व्यतीत कारिकै, पातःकाळ देववंदना करिकै, अर पश्चात् पूजनविधिकरि अर पात्रकूं भोजन कराय कॅरिकै जो पारणा करे, ताकै प्रोषघोपवास होय है ॥ एकहू निरारंभ उपवास उपशांत भया जो करे है, सो बहुतप्रकारका चिरकाळतें संचय कीया कर्मकी ळीळामात्रकरिकै निर्जरा करे है । अर जो पुरुष उपवासके दिनहू आरंभ करे है, सो केवळ अपने देहकूं शोषण करे है अर कर्मका लेशहू नहीं नष्ट करे है ॥ ऐसैं प्रोषध नामा चौथा स्थान है ॥

बहुरि जो मूल फल पत्र साक शाखा पुष्प कद बीज कूंपल इत्यादि अपक सचित्त नहीं भक्षण करें, सो सचित्तका त्याग नामा पंचम स्थान है। जातें अग्निमें तप्त कीया, तथा अग्निकरि पकाया, तथा शुष्क भया, तथा आमिली ल्रणकिर मिस्या हुवा द्रव्य, तथा जंत्र काष्ट्रपाषाणादिकके अनेकश्कारके उपकरण तिनिकरि छेद्या जे समस्त द्रव्य, ते प्राप्तुक हैं, सो भक्षण करनेयोग्य हैं॥ जो त्यागी आप सचित्त भक्षण नहीं करें, ताकूं अन्यके अर्थि सचित्त भोजन करावना युक्त नहीं है। जातें भक्षण करनेमें अर करावनेमें कुछ भी विशेष नहीं है। जो पुरुष सचित्तवस्तुका त्याग करे है, सो बहुत जीवनिकी दया धारण करे है अर जो सचित्तका त्याग कीया, सो कापुरुषनिकरि नहीं जीती जाय ऐसी जिव्हाकुं जीते है अर जिनेंद्रका वचन पालत है॥ ऐसें सचित्तके त्यागीका पंचम स्थान कह्या॥

[३३

बहुरि जो अन्न पान खाद्य स्वाद्य ऐसें च्यारिप्रकारका भोजन रात्रिविषें करे नहीं, करावे नहीं, अन्य भोजन करें ताकी प्रशंसा करें नहीं, तिसके राविभोजनत्याग नामा छट्टा स्थान है ॥ जो रात्रिभोजनका त्याग करिके अर रात्रिके विषें आरंभकाह् स्याग करे है; सो एकवर्षमें छह महीनेके उपवास करे है ॥ बहुरि जो अपनी विवाही स्त्रीकाह् त्याग करि स्त्रीमान्नतें विरक्त हुवा गृहमें तिष्ठे है अर अपनी स्त्रीतें रागरूप कथा तथा पूर्वे भोगे भोगनिकी कथाद्धं वर्जिकरिके को मल्दास्या आसन विकाररूप वस्त्र आभरणके त्याग करिके स्त्रीनितें भिन्नस्थानमें शस्या आसन ब्रह्मचर्यत्रत पाले है, ताके ब्रह्मचर्य नामा सातवा स्थान होइ है ॥

बहुरि जो सेवा कृषि वाणिज्य शिलिप इत्यादिक धन उपार्जन करनेके कारण तथा हिंसाके कारण आरंभकूं त्यागिकरि, अर अपने गृहमें द्रज्य होय तिनका स्त्रीपुत्रकुटुंबादिकनिका विभाग करि, अर अपने योग्यकूं आप प्रहण करि, अन्यमें ममता त्यागि नवीन उपार्जनका त्याग करि, अपने परिग्रहमें संतोष करि, जो अपने निकट द्रज्य राखि छीया ताकूं अन्न वा वस्त्रादिक मोगनिमें वा पूजा दान इत्यादिकमें ज्यतीत करता वा सज्जनादिकनिकूं देता वांछारहित काछ ज्यतीत करें, ताके आरंमत्याग नामा अष्टमस्थान होय है ॥ इहां इतना विशेष जानना—जो आप अस्य धन अपने खाने पीने दानपुजादिकके निमित्त राख्या था, ताकूं कदाचित् चोर वा दुष्ट राजा वा दायियादार वा कपूतपुत्रादिक हरण करें, तो नींचा नहीं उतरें, "जो मेरा जीवनेका निमित्त धन था, सो जाता रह्या,

नवीन उपार्जनका मेरे त्याग है, अब मै कहां करूं ! कैसें जीवुं ! ऐसें अरतिकूं नहीं प्राप्त होय है, धैर्यका धारक धर्मात्मा विचारे है—यइ परिप्रह दोऊ लोकमें दु:लका देनेवाला है, सो मै अज्ञानी मोहकरि अंघ हुवा प्रहणकरि राख्या था, सो अब दैवनें मेरा बडा उपकार कीया, जो, ऐसें बंधनतें सहज छूट्या " ऐसा चितन करता परिप्रहस्याग नामा नवमी पयडीकूं प्राप्त होय है, उलटा आरंभ करि परिप्रहम्हणमें चित्त नहीं करे हैं, ताक आरंभत्याग नामा आठमा स्थान होय ॥

बहुरि नो राग द्वेष काम कोधादिक अभ्यंतर परिग्रहकुं अत्यंत मंद्र करिके, अर धन धान्यादिक परिग्रहकुं अनर्थ करनेवाले जानि, बाह्यपरिग्रहतें विरक्त होइ करिकें, शीत उष्णादिककी वेदना निवारणेके कारण प्रमाणीक वस्त्र तथा पीतल तामाका जलका पात्र वा भोजनका एक पात्र इनि विना अन्य सुवर्ण रूपा वस्त्र आभरण शब्या यान वाहन गृहादिक अपने पुत्रादिकनिकुं समर्पण करि, अपने गृहमें भोजन करताहू अपनी स्त्रीपुत्रादिक उपरि कोड प्रकार उजर नहीं करता, परमसंतोषी हुवा, धर्मध्यानतें काल ब्यतीत करें, ताके परिग्रहत्याग नामा नवमा स्थान है।

बहुरि गृहके कार्य जे धनउपार्जन वा विवाहादिक वा मिष्टभोजनादिक स्त्रीपुत्रादिकनिकरि कीये, तिनकी अनुमोदनाका त्याग करे वा कडवा खाटा खाये अलूणा भोजन जो मक्षण करनेमें आवै ताकूं खाये अलूगा बुरा भठा नहीं कहै, ताकै अनुमतित्याग नाम दशमा स्थान है ॥ बहुरि जो गृहकूं त्यागि मुनिनके निकटि जाय व्रत प्रहण करि, समस्त परिप्रहका त्याग करि, कमंडलु पीछी प्रहण करे, अर एक कौपीन राखे, तथा शीतादिकके परीषह निवारण करनेकूं एक वस्त्र राखे—जिसतें समस्त अंग नही आच्छादन होय ऐसा वोछा वस्त्र राखे, वा अपने उद्देश्य किहये आपके निमित्त कीया भोजनकूं नही प्रहण करता समितिगृप्तीकूं पालता मुनीधरिनकी नांइ भिक्षा भोजन करे, मौनतें जाय याचनारिहत लालसारिहत रस निस्त कडवा मीठा जो मिले तामें मिलनतारिहत हाउद्ध भोजन करे, ताके उद्दिष्ट आहारत्याग नामा ग्यारमा स्थान है ॥ ऐसें ये ग्यारह प्रतिमा वर्णन करी, इनमें जो जो स्थान होय सो सो पूर्वपूर्वसहित होय । इनि एकादशस्थाननिमेंतें कोऊ स्थान धारि जो सहेखनामरण करे, सो बालवंडितमरण है ॥ सो अव कहे हैं ॥ गाथा—

आसुकारे मरणे अव्ये । छिण्णाए जीविदासाए ॥ णादीहि वा अमुको । पांच्छमसछिहणमकासी ॥२००९॥ अर्थ-श्रावकत्रतके धारकका शीघ मरण आवता संता अर जीवितकी आशा नहीं छूटता संता वा अपने कुटुंबीनिकार नहीं छूटते पश्चिम सछेखनाकुं करे ॥ भावार्थ-अणुवतीका मरन तो नजीक आजाय अर आपके जीवनेमें आशा घटी नहीं अर स्त्री पुत्र कुटुंब बंधुजन आपकुं छोडचा नहीं—दीक्षा छेने दे नहीं, तिद अणुवतिनसिहत गृहमें तिष्ठताही सछेखना करें । जातें जो धर्मात्मा गृहस्थ मुनिपणा अंगीकार किया चाहै, सो अपने कुटुंबके जननिकुं ऐसें पृछि अर बंधुसमूहकुं अर माता पिता स्त्री पुत्रादिकतितें

₹ [

### दिगंबर जैन ।

आपक् इडावे, अपने बंधुसमूहकूं ऐसे पृष्ठें-अहो ! इस हमारे शरीरके बंधुसमूहमें वर्तनेवाले आत्मा हो ! इस मेरे आत्माके माहि तिहारा कुछद नही है, या निश्चयतें तुम जानत हो, तातें तुमारेताई पृष्ठत हूं, अनार हमारा आत्माकै ज्ञानज्योति उदय भया हैं, तातें मेरा अनादिका बंधु जो मेरा आत्मा तार्क्स प्राप्त भया चाहे है, मेरा शुद्धातमाही मेरा बंधु है; अन्य बंधुके देहका संबंध मेरे देहते है, मोते नाही। अहो! इस शरीरके उत्पन्न करनेवाले जनकके आत्मा तथा अहो! मेरे शरीरकूं उत्पन्न करनेवाली जननीके आत्मा! मेरे आत्माकूं तुम नही उत्पन्न कीया है, या निश्चयकरिकै दुम जानत हो, तातें अब मेरे आत्माकूं तुम छांडो । अब हमारा आत्माकै ज्ञानज्योति प्रकट भया है, तातें आपका अनादिका माता पिता जो अपना आत्मा तार्कु प्राप्त होय है । अहो ! इस शरीरके आत्मा ! मेरे आत्माकूं तू नही रमावत है,ऐसैं तूं जाणि मेरा इस आत्माकूं छांडहू, अब हमारे आत्माकै ज्ञानज्योति प्रकट भया है, तातें आत्मानुभूतीही जो मेरा आत्माकु रमावनेवाली अनादिकी रमणी ताही प्राप्त भया चाहे है। अहो ! इस शरीरके पूत्रका आत्मा हो ! मेरा आत्मा तुमकूं नही उत्पन्न कीया है, या तुम निश्चयकरि जाणो, तातें मेरे आत्माकूं छांड हू। अब मेरा आत्माके ज्ञानज्योति प्रकट भया है, तातें आपका आत्माही जो अनादितें उपज्या अपना पुत्र, ताही प्राप्त हुवा चाहे हैं। ऐसे बंधुनन वा पिता माता स्त्री पुत्रनितें आपतें आपकूं छुडावे। अर जो छुटुंनी नन आपकूं निराला नही होने दे, दिगंबरी दीक्षा नही धारण करने दे, तो अपने गृह-विषेंही पश्चिमसङ्ख्ता करे ॥ गाथा-

#### आराधनास्वरूप ।

[ 3/9

आलोचिदिणस्सल्लो । सघरे चेवासहित्तु संथारे ॥ जदि मरदि देसविरदो ।तंतुत्तं वालपंडिदयं॥२०८०॥

अर्थ — राभ्यरहित हुवा पंचपरमेष्ठीके अर्थि आलोचना करि अपने गृहिवपेंही शुद्ध संस्तरिवपें तिष्ठिकरि जो देशविरितका धारी गृहस्थ मरण करे, सो बालपंडितमरण भगवान् परमागममें कह्या है ॥ गाथा—

जो भत्तपदिण्णाए । उनकमोः वित्यरेण णिहिटो ।! सो चेव वालपंडिद- । मरणे णेर्ड जहाजोगो ।। ८१ ॥ अर्थ--जो भक्तप्रतिज्ञामें संन्यासका विस्तार करिकै कथन कीया, सोही बाल पंडितमरणविषे यथायोग्य जानना योग्य है ॥ गाथा-

वेमाणिएसु कप्पो-। वगेसु णियमेण तस्स उननादो ॥ णियमा सिज्जदि उक्त-। स्सएण सो सत्तपम्मि भवे ॥८२॥

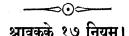
अर्थ—तिस वालपंडितमरण करनेवालेका उत्पाद स्वर्गनिवासी वैमानिक देवनिविषें नियमतें होय है। अर सो समाधिमरणके प्रभा-वतें उत्क्रष्टताकरि सप्तम भवविषें नियमतें सिद्ध होय है।। गाथा—

इय वाळपंडियं हो-। दि घरणमरहंतसासणे दिव्वं॥ एत्तो पंडिदपंडिद-। मरणं वोच्छं समासेण ॥८३॥

अर्थ—इसप्रकार बालपंडितमरण होय है। सो अरहंतके आग-ममें कह्या है।। तिस परमागमके अनुसार इस ग्रंथविषें दिख्लया। मैं मेरी रुचिविरचित नहीं कह्या है। भगवानके अनादिनिधन परमा-गममें अनंतकालतें अनंत सर्वज्ञ देव ऐसैंही कह्या है।। अब आग्रे

#### दिगंबर जैन ।

पंडितपंडितमरणकूं संक्षेपकरि कहूंगा। ऐसे बालपंडितमरणकूं दश गाथानिमें वर्णन कीया॥



भोजैने वटैरसे पाँने, कुंकुर्मेदि विलेपने।
पुष्प ताम्बुँलगीतेषुँ, तृत्यादि ब्रह्मेंचर्यके॥१॥
स्नीन भूषण बस्त्रेषुँ वीहैने शीर्यं नीसेने।
सचित्तंर्वे दिशार्त्यांज्य मेतत् सप्त दशानि च ॥२॥

## जिनमतका मृल सिद्धांत।

अहिंसा परमो धर्मो यतो धर्मस्ततो जयः॥

पश्च-हिंसा किसको कहते है ?

उत्तर—(१) अपने मनमें अपनी आत्माका बुरा व दूसरोंका बुरा विचारना हिंसा है। अपने बचनोंसे दूसरोंके मनको और शरीरको दुख देना हिंसा है। अपने शरीरसे दूसरोंके शरीरको दुख पहुंचाना हिंसा है।

प्रश्न-द्या किसको कहते है ?

उत्तर—(१) अपनी आत्माको कोध मान माया छोभ मोह और कामसे बचाना दया है। (२) दूसरोंके हरप्रकारके दुःखको अपनी शक्तिभर दूर करना दया है। (३) दया परिणामों (भावों) के आधीन है। (४) किसी प्राणीका अपना शरीरसे नाश

#### आराधनास्बरूप ।

[ 39

होजानेपर भी यदि हमारे परिणाम उसकी रक्षाके है तो हिंसा नहीं दया है।

(५) ध्यानके बलसे अपनी आत्माका आपमें लीन होजाना दया है।

प्रश्न—चार योग याने वेट कौन कौनसे कहते है उसका नाम क्या है ?

उत्तर--प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रञ्यानुयोग।

**प्रश्न**—उपर कहे चार योगकी ओलख क्या है ?

#### दोहा ।

सुदेव सद्गुरूए कह्यां, सदआगम सुनो भेद । हिंसा जीव जहां नहीं, सत्य शौचनो भेट 11 8 11 प्रथमानु शुभ योगमां, कथा प्रवर्तेड सार । उत्तम त्रेसठ पुरूषनी, सुणजो तेह मोजार 11 7 11 अवर योग उत्तम कह्यो, करणानु अभीधान । कथा अनोपम तेहमां, त्रीलोकसारनुमान 11311 निर्मल मुनिवरनी क्रिया, श्रावकनो आचार। त्रतिय योग चरणातुए, सांभळजो निरधार 11 8 11 तत्व अर्थ खट द्रव्यसुं, पंचास्तीकाय । द्रज्यानु शुभ योगमां, बोले जिनवरराय 11 4 11 देव शास्त्र गुरु सत्य ए, परम पराये जान । वचन विरोध जहां नहीं, ते शुभ शास्त्र प्रमाण 11 & 11

#### दिगंबर जैन । 80

पश्च-६३ सलाका पुरुष किसको कहते है ? उत्तर--नव नारायण, नव प्रति नारायण, नव बलभद्र, बारा ्चत्रवर्ती और चौबीस तीर्थंकर ।

दो इंद्रिमें पंचेंद्रि तककी पीछान ॥ शंख सीपो ने अळसीया, क्रस्मी कीतक जोय । जलो वाळो अलबधीया, भादरवा बहु होय ॥ १ ॥ जीव वे इंद्रि ये कह्या, इयेल देह याद । तेह तणी रक्षा करो, मुकी सकल प्रमाद ॥ चांचड मांकड ज़ंबह, मंकोडा मन आण। वीछ कीडी कंशवा, ए त्रेइंद्रि जाण ॥ २ ॥ डंम मंस माखी वणी, भमरा तीड पतंग । इ आदे बहु विधि कह्या, चौ इंद्रि जीव चंग ॥ ४ ॥ नरक पशु सुर भानवी, चौगतिमें उपजंत । त्रस पंचेंद्रि ये कह्या, जाणी करो जतन ॥ ५ ॥ प्रश्न-रत्नत्रय किसको कहते है ?

उत्तर सैम्यक दर्शनजी, सैम्यक ज्ञानजी और सम्यक चारित्रजी ।

प्र०--सम्यक् दर्शन किसको कहते है ?

उ०-रागादिक मिटावनेका श्रद्धान होय सोइ श्रद्धान सम्यक दर्शन है।

**प्रश्न**—सम्यक्तान किसको कहते है ?

88

#### आराधनास्वरूप ।

उत्तर--जैसे रागादिक मिटावनेका जानना होय सोइ जाननां सो सम्यक्तान है।

प्रश्न-सम्यक्चारित्र किसको कहते है ?

उत्तर— नैसे रागादिक मिट्टे सोही आचार सम्यक्चारित्र है ऐसा मोक्षमार्ग प्रकाश पृष्ठ ३२६में कहा है।

प्रश्न-राग किसको कहते है ?

उत्तर—किसी पदार्थको इष्ट (मनकुं प्रसन करे) ऐसा जानकर उसमें प्रीतिरूप परिणाम उसको राग कहते है।

प्रश्न-देष किसको कहते है ?

उरार—किसी पदार्थको अपना अनिष्ट (अप्रिय) जान उसमें अप्रीति परिणाम उसीको द्वेष कहते हैं ।

#### शिष्यका प्रश्न ।

ज्ञानवंतको भोग निर्जरा हेतु है। अज्ञानीको भोग बंध फल देतु है॥ यह अचरजकी बात हिये नहि आवही, पुछे कोउ शिष्य गुरू समझावही॥

## उत्तर (सवैया ३१सा 1)

दया दान पूजादिक विषय कषायादिक दुहु कर्म भोगयें दुहूको एक खेत है ॥ ज्ञानी मूढ करम करत दीसे एकसे पैं परिणाम भेद न्यारो न्यारो फल देत है ॥ ज्ञानवंत करनी करे पैं उदासीन रूप ममता न घरे ताते निर्जराको हेतु है ॥ वह करतित मुढ करेपे मगन रूप अंध भयो ममतासों वंध फल लेत है ॥

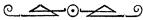
अष्टांग वंदनाकी स्तुति।

जुगल पानी जुगल पांड, पंचम शीस सपर्श भूवी । विमल मनोवच काय, यह अष्टांग प्रणाम हवी ॥

## दिगंबर जैन

## ॥ श्लोक ॥ पुनः

हस्तो पादौ तथा द्वौ द्वौ शिरो भूमौ च पंचमः । मनोवाकाय शुद्धि च प्रणमोऽष्टांगमुच्यते ॥ १ ॥



## अष्टांगवंदना करतेसमय निम्नलिखित पढो-

मन वचन कायकी शुद्धता करके वदो हों; मस्तक नमायके, पृथ्वीसों लगायके, खुशालीसों, प्रफुल्लिततासों, बड़ा हर्ष सहित में वंदो हों, दंडवत करों हों, नमस्कार करों हों, अरहंतदेवको वा पंच परमेष्ठीजीको, जय बोलो अरहंत महारा-जकी जय।

## अरज करते समय निम्नलिखित पढ़ो।

थन घड़ी धन्य भाग्य, आजका दिन मेरा जन्म सफल भया, मेरी काया सफल हुई, मेरे नेत्र सफल भये, हेभगवान । दुराचरणथी दूर करी सारे चरणे चलावी तुमारी शरणे लो। जय बोलो पंच परमेष्टी महाराजकी जय।



## शिखामणका पद ।

वडी दो बडी मंदिरजीमें आय करो । आय करो मन लगाय करो ॥ बडी० ॥ जग घंधेमें सब दिन खोयो । कुच्छ तो

#### आराधनास्वरूप ।

[83

धरममें बीताय करो ॥ वडी । । जग धंधेमें सब धन खोयो । कुच्छ तो धरममें लगाय करो ॥ वडी ० ॥ कहे सो ग्यानी सुन भव प्राणी । आवत मनको लगाय करो । वडी दो वडी मंदरजीमें आय करो ॥

#### राग भेरवी।

गुरूजी मैंने औगुण बोत किये, प्रमुजी मैंने औगुण बोत किये ॥ पांउ घरे घरनीपे उतने खून भये ॥ गुरूजी० ॥ जितनी नारी नजर भर देखी, उतने पाप भये ॥ गुरूजी० ॥

स्त्री उनाच-जिते पुरुष नजर भर देखे । उतनन पाप भये । ॥ गुरुजी । ॥ रतनचंदकी यही अरज है, बोजा बोत भये, औगुणः बोत किये ॥ गुरुजी ० ॥

## राग--शार्दूल

#### पुरुष उवाच-

मोटी ते सहु मात्र तुरुय गणुं हुं छोटी गणुं पुत्रीओ ॥ ने होये सम वर्षमां मुन तणां तेने गणुं भगीनीयो ॥ एवी मानव मात्रमां मुन थजो प्रीति तणी वृष्टीयो ॥ आ काले मुनने प्रमु करी कृषा आशिष एवी दीयो ॥

#### स्त्री उवाच---

मोटा ते सहु पित्र तुल्य गणुं हुं छोटा गणुं पुत्रओ ॥ ने होये समवर्षमां मुन तणा तेने गणुं बन्धुओ ॥ एवी मानव मात्रमां मुन थनो प्रीति तणी वृष्टीओ ॥ आ काळे मुनने प्रमु करी कृपा आशीष एवी दीयो ॥

## दिगंबर जैन ।

## जिनेन्द्र जन्माभिषेक।

प्रमू पर इंद्र कलश भरी लायो। रैक्टराजपर सिन समाज सब, जनम समय नहवायो ॥देका। क्षीरोदक भरि कनक कुंभमें, हाथो हाथ प्रुर लायो । मंत्र सहित सो कल्टा सचीपति, प्रमु शिरधार हरायो ॥प्रमू॥१॥ अघवच भभ भभ वच वच वच चच, धुनि दशहूं दिशि छायो। साढे बारह कोड जातिके, वाजन देव बजायो ॥प्रमू०॥ २॥ सचि रचि रचि शंगार सँवारत, सो नहिं जात बतायो। भूषन वसन अनूपम सो सजि, हरिषत नाच रचायो ॥ प्रभू०॥ ३ ॥ यग नूपुर झननननन बाजत, तननन तान उठायो। घनननन घंटा घन नादत, ध्रुगत ध्रुगत गत छायो ॥घ०॥४॥ द्रिम द्रिम द्रिम मुदंग गत बाजत, थेइ थेइ थेइ पग पायो। सगृहि सरंगि घोर सोर सनि, भवीक मोर विहसायो ॥प्र०॥४॥ तांडव निरत सचीपति कीनों, निज भवको फल पायो। निज नियोग करि तब सब सुर मिलि, प्रमुहि पिता घर लायो ॥प्र॥६॥ मातु गोदमें सोंपि प्रभू कहँ, बहु विधि सुख उपजायो ॥ अभुसेवा हित देव राखि कैं, छुर निज धाम सिधायो ॥प्रमृ०॥७॥ प्रमुके वय समान सुरतन धरि, सेवा करत सहायो। देवी दास वृंद जिनवरको, जनम कल्यानक गामो ॥प्रभू०॥८॥

हजुरी पद (राग धनाश्री) आ वसंत चल्ले महागीरपर आज प्रभूजीका न्हवन करेंगे॥आ वसंत०॥टेक॥ कवन कल्लस घरे सीर उपर। क्षीरदंघी जल ल्लान भरेंगे। केसर और क्छर मिलाके। लाय प्रमूजीका न्हवन करेंगे ॥आ वसंत ०॥१॥ अष्ट दरवमें पूजा करके। अक्षय पदकी प्राप्ति करेंगे। पुष्प चढाय मंगाय महाचरू। दीपक जोति जगाय घरेंगे ॥आ वसंत ०॥२॥ खेवे धुप सुगंघ चरन बीच। जात करमके बंस चलेंगे। फल चहायके अरघ आरती। अब हम पुत्र मंडार मेंगेंगे॥आ वसंत ॥३॥ चरन पकड़ और यसर पसरके। झघर जघर अरज दास करेंगे। द्रग सुल सन्मुल होय प्रमुके। मोक्ष लिये बीन नाही टरेंगे॥आ वसंत ० ४॥ द्रग सुल सन्मुल होय प्रमुके। मोक्ष लिये बीन नाही टरेंगे॥आ वसंत ० ४॥

## जाप करनेके सात प्रकारके महामंत्र।

(१) पेतिस अक्षरका मंत्र ॥

णमो अरहंताणं। णमो सिद्धाणं। णमो आइरियाणं। णमो उनज्जायाणं। णमो लोए सब्ब साहूणं।।

(२) सोलह अक्षरका मंत्र।

अरहंत सिद्ध आइरिय उवज्झाय साह् ॥ अर्थोत्-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्यायसर्वसाधुम्यो नमः ॥

(३) छह अक्षरका मंत्र।

॥ अरहंत सिद्ध ॥

(४) पांच अक्षरका मंत्र॥

" अप्तिआउसा " ॥ यह पंच परमेष्ठीके आदि अक्षर है ।

(५) चार अक्षरका मंत्र॥

" अरहंत "

8£ ]

### दिगंबर जैन ।

## (६) दो अक्षरका मंत्र॥

" सिद्ध याने अई । "

#### एक अक्षरका मंत्र।

"ॐ" इसमें पंचपरमेष्टीके आदि अक्षर सर्व हैं। जैसे अरहंतका अ, अशरीर कहिये सिद्ध तिसका अ, आचार्यका अ, उपाध्यायका उ, और मुनिका म, ऐसे पांच अक्षर—अ अ आ उ म=ओम् अर्थात् ॐ हुवा ऐसा सिद्ध है।।

#### ।। गाथा ॥

अरहंता अशरीरा आईरिया तह उत्रज्जाया मुणिणो । पदम्त्रखरणिप्पराणो ओंकारो पंच परमेडी ॥ १ ॥

अर्थ-उत्तरके सात प्रकारके महामंत्र कहलाते हैं। इनका जान करना श्रेष्ठ है और कर्मबंधके एकसो आठ भेद अर्थात् द्वार है। इसका कारण १०८ मणि अर्थात दानेकी मालासे स्मरण करना चाहिये। माला उत्तर तीन दाने होते हैं उनपर सम्यकृद्दीन, सम्यकृतान और सम्यकृचारित्र ऐसा पड़ना चाहिये।

## **--•**D**⊙**©•---

## मुनि महाराजका पद ।

ऐसे मुनी हमरे मनमें भायो । जाके बंदत पाप नसायो ॥ऐसे ।। च्यार बीस परिगृह जाने त्यागे । निम्नंथ नांम कहायो । तरण तारण वे मुनीवर । कहिए परम जती पद पायो ॥ऐसे ।॥१॥

#### आराधनास्वरूप ।

80

पंच महावृत पंच सुमित । त्रय गुप्तीजी धरायो ।
अठवीस मूलगुण जाके सोहीए । रागद्वेष नहीं पायो ॥ऐसे०॥२॥
तीन काल वे जोग जे साधे । पंचम गती मन भायो ।
बाबीस परीसह सहते धीरज । रान्नु मित्रु सम मायो ॥ऐसे०॥३॥
श्रीवम काल परवत पर गडे । रवीसम दृष्टी लगायो ।
एसे०॥४॥
पंच प्रमाद रहित ऐसे मुनी । क्षपक श्रेणी मन भायो ।
अङ करमकुं दूर कीए जीने । सीवरमणी वर पायो ॥ऐसे०॥४॥
ऐसे मुनीकुं निशादिन वंदित । कर्म कलंक नसायो ।
सीवलाल पंडित मन वच तनतें। करजोडी सीसनमायो॥ऐसे०॥६॥

(२)

सो है जैनका रागी। अबधु सो है जैनका रागी।
जाकी सुरत मुळ धुन ळागी ॥अबधु०॥१॥
साधु अष्ट करम सुंझ घढे। सुन्य बांधे धर्मशाळा।
सोहं सबका धागा साथे। जपे अजपा माळा ॥अबधु०॥२॥
गंगा जुमना मध्य सरस्वती। अधर वहे जळधारा।
करी रनान मगन होइ बैठे। तोडे कर्मदळ भारा॥अबधु०॥३॥
आप अभ्यंतर जोत बीराजे। बंकनाळ ब्रहे सुळा।
पश्चिम दीशकी सडकी खोळो। तो बाजे अणहद तुरा॥अबधु०॥॥
पंच भूतका भर्म मिटाया। छठे मांही समाया।
विनय प्रमु शुं ज्योत मिळी जब। फिर संसार न आया॥अबधु०॥९॥

## ४८ ] दिगंबर जैन।

(३)

अवधु वैराग वेटा जाया । वाने खोज कुटंव सब खाया ॥अवधु॥ जेने ते खाइ ममता माया । मुख दुःव दोनुं भाई । काम कोध दोनोको खाइ खाइ अशाबाई ॥ अव०॥ १॥ दुरमत दादी मच्छर दादा मुख देखत ही मुआ । मंगल्रूपी वधाइ बाजी ए जब वेटा हुआ ॥ अव०॥ २॥ एन्य पाप पडोशी खाइ । मान काम दोउ मामा । मोह नगरका राजा खाया। पीछे प्रेम ते गामा॥ अव०॥ २॥ भाव नाम धर्यो वेटाको । महीमा वर्णव्यो न जाय। आनंद घन प्रमु भाव प्रगट करो। घट घट रहो समाय॥अव०॥॥॥

## आत्माका गुण।

आतमके गुन गाउ। अब मैं आतमके गुन गाउ।
और कहु नहीं घ्याउं॥ अब मैं ।। टेक ॥
आप ही ब्रह्मा आप महेमुर। आप ही वीष्णु कहाउं।
आप घणेंद्र चक्रवत आप ही। आप ही आप समाऊं॥अब मैं ।॥१॥
आप ही ज्ञानी आप ही ध्यानी। आप ही संत कहाउं।
आप ही वक्ता आप ही श्रोता। आप ही आप मनाउं॥अब मैं ।॥२॥
आप ही क्तान आप ही अंजन। आप ही आप नचाऊं।
आप ही कर्मन आप अकर्मन। आप ही आप नवाउं।।अब मैं ।॥३॥
आप ही सुखी आप ही दुखी। आप ही धर्म दिहाऊं।
आप ही आप अपनमें सेवा। आत्मराम छखाऊं॥ अब मैं ।॥॥॥





# सिर्फ एक ही।

Basabasasaa Ba<sup>s</sup>

सारी जैनसमाजमें सिर्फ "दिगंबर जैन" ही एक हिंदीगुजराती भाषाका ऐमा नियमित मासिकपत्र है, जो अपने
ग्राहकोंको हरएक वर्ष बड़ा भारी सचित्र खास अंक, जैनतिथिदर्पण और कई पुस्तकें उपहारमें देता है, जब कि इसका
उपहारोंके डांकच्यय सहित वार्षिक मूल्य १॥।) रु० ही है।

मेनेजर " दिगंबर जैन " चंदावाड़ी-सूरत



For Private And Personal Use Only